वक्तव्य

अशोक भारत ही नहीं, वरन् संसार के इतिहास में एक अद्वितीय सम्राट हुआ है। प्रस्तुत पुस्तक में इस महान व्यक्ति के व्यक्तित्व, उसके कार्यों, तथा उसके समय की अन्य ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख हुआ है। अशोक द्वारा उत्कीर्ण समस्त अभिलेखों का अनुवाद और उनका मूल पाठ सरलता से एक स्थान पर प्राप्त नहीं होता, अतः इस पुस्तक में उसके समस्त अभिलेखों का अनुवाद और उनका मूल पाठ भी दिया गया है

यह पुस्तक भी हमारी पुस्तक 'चन्द्रगुप्त मौर्य' के समान ऐतिहासिक पत्रिकाओं में प्रकाशित हमारे अनेक संशोधनात्मक लेखों पर आधारित है। इन लेखों में अशोक और उसके समय के इतिहास पर नया प्रकाश डाला गया है। उनमें से कुछ प्रमुख लेखों की सूची हम नीचे देते हैं।

अमरावती
१५ फरवरी सन् १६४१

हरिश्चद्र सेठ

(1) Sidelights on Asoka. Annals of the Bhandarkar Oriental Research Institute. Vol. XX P. 186

(2) Asoka the Great. Triveni. Vol. XI. No. 6.

(3) Origin of Pali. Nagpur University Journal. No. 2.

(4) Chronology of Asokan Inscriptions. Journal of Indian History. Vol. XVII. Part 3.

(5) Central Asiatic Provinces of the Mauryan Empire Indian Historical Quarterly, Vol. XIII. Part 3.

(6) Kingdom of Khotan (Chinese Turkistan) under the Mauryas. Eighth International History Congress, Indian Historical Quarterly Vol. XV.

(7) Buddha Nirvana and some other dates in ancient Indian Chronology. Second Indian Culture Conference. Indian Culture, January 1939.

(8) An obscure Passage in Asokan Inscriptions IV. Indian History Congress. Lahore 1940.

विषय-सूची

भाग १

अशोक के समय का इतिहास

भाग २

अशोक के खुदवाये लेख

१२ अशोक के लेखों का सरल अनुवाद

भाग ३

१३ अशोक के उत्कीर्ण लेखो का मूल पाठ

प्रधान शिलालेख

भाग १
अशोक के समय का इतिहास

अध्याय १

वंश परिचय ।

यवन आक्रमणकारियों को भारत से भगा कर लगभग ३२५ ईसा पूर्व में चन्द्रगुप्त मौर्य्य ने पश्चिमोत्तर भारत में प्रथम बार अपनी शक्ति का सगठन किया। इसके थोड़े ही समय पश्चात् उसने मगध को जीतकर, पाटलिपुत्र को अपनी राजधानी बनाया, और एक विशाल चक्रवर्ती साम्राज्य स्थापित किया। चन्द्रगुप्त की विजय, विशाल साम्राज्य निर्माण, सफल शासन प्रणाली, तथा उसके समय में देश और प्रजा की उन्नति, और उस के हित के लिये किये गये महान कार्यों पर जब हम विचार करते है, तो हमे विदित होता है, कि वह केवल भारतीय राजनैतिक इतिहास का ही सब से महान व्यक्ति नहीं है, वरन् ससार के इतिहास के इने गिने महान और सफल विजेताओं, राष्ट्रनिर्माताओं और शासको में भी उसका स्थान बहुत ऊचा है। सेल्युकस को हराने के अतिरिक्त चन्द्रगुप्त ने ही एलेक्जेण्डर को भारत से बाहर खदेड़ निकाला था। इन सब बातों से अनभिज्ञ होते हुए भी इतिहासकार विन्सेन्ट स्मिथ ने चन्द्रगुप्त के लिये निम्न लिखित श्रद्धाञ्जलि भेट की है।
"अट्ठारह वर्ष के समय में चन्द्रगुप्त ने पजाब और सिन्ध से

मेसेडोनियन सेनाओं को बाहर निकाल दिया। विजयी सेल्युकस को पराजित कर उसका मान मर्दन किया, और लगभग समस्त भारत और एरियाना के अधिकांश भाग को अपने अधिकार में कर लिया। उसके इन कृत्यों के कारण हम उसे इतिहास के महान और सफल अधिपतियों की श्रेणी में रख सकते हैं।* "

एलेक्जेण्डर और उसके बाद सेल्युकस पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् चन्द्रगुप्त अपने समय के संसार में सब से शक्तिशाली व्यक्ति के रूप में हमारे सम्मुख उपस्थित होता है। यदि वह अपनी शक्ति को पश्चिम की ओर ही केन्द्रित कर देता, तो अबाधित रूप से वह विशाल परशियन साम्राज्य को, जो उस समय एलेक्जेण्डर के संहारक प्रहार के कारण अन्तिम साँसें लेरहा था, पुनः उसके प्राचीन शौर्य्य पर पहुंचा देता। वह इजिप्ट मेसेडन और ग्रीस के सुदूर प्रान्तों पर भी, पुनः परशिया का प्रभुत्व स्थापित करने में सफल होता। दैवयोग से उसने एक विशाल भारतीय साम्राज्य स्थापित करने का विचार किया, और थोड़े ही दिनों में उसे पूरा कर दिखाया। उसका यह उद्योग प्राचीन संसार के सब से बड़े राजनैतिक कार्यों में से एक है। जैसा कि विन्सेन्ट स्मिथ ने लिखा है, "चन्द्रगुप्त तथा उस के मन्त्री ने भारतीय साम्राज्य स्थापित करने की अपनी प्रबल इच्छा को, चौबीस वर्ष के समय में कार्य रूप में परिणत कर दिया। इस साम्राज्य का विस्तार पूर्व में एक समुद्र से लेकर पश्चिम में दूसरे समुद्र तक था।

---

* Early History of India (4th Ed.) P. 126

इसके अन्तगत समस्त भारतवर्ष और अफग़ानिस्तान आदि देश थे। इतिहास में बहुत ही कम ऐसे राजनैतिक कृत्य मिल सकेंगे। केवल एक साम्राज्य ही स्थापित नहीं किया गया था, प्रत्युत उस की व्यवस्था भी उपयुक्त ढङ्ग से की गई थी। पाटलिपुत्र से संचालित सम्राट की आज्ञा, सिन्ध नद तथा अरब सागर के तट-वर्ती देशों तक अनुलङ्घित पालन की जाती थी। प्रथम भारतीय सम्राट के कौशल द्वारा स्थापित यह विशाल साम्राज्य सुरक्षितरूप से उसके पुत्र तथा पौत्र को मिला *।

चन्द्रगुप्त के वंश का अभी तक ठीक ठीक पता नहीं चला है। यह आख्यान तो बहुत बाद के युग का है, कि चन्द्रगुप्त की माता, या अन्य कथानुसार उसकी मातामही 'मुरा', मगध के राजा नन्द की एक नीचकुलोत्पन्न स्त्री थी, और चन्द्रगुप्त द्वारा स्थापित वंश की उपाधि मुरा के नाम पर पड़ी। इस आख्यान का कोई भी प्राचीन उल्लेख नहीं मिलता। १७१३ ईसवी में ढुण्ढिराज द्वारा लिखित विशाखदत्त के मुद्राराक्षस नाटक की प्रस्तावना या लगभग उसी समय की विष्णु पुराण की एक टीका के अतिरिक्त और कहीं भी उक्त कथा का कोई वृतान्त प्राप्त नहीं होता। विष्णुपुराण की इस टीका में भी केवल यही कहा गया है कि चन्द्रगुप्त और उसके वंश का नाम 'मौर्य्य' इस कारण पड़ा कि वह मुरा नाम की पत्नी से नन्द का पुत्र था। "चन्द्रगुप्तः नन्दस्यैव पत्न्यन्तरस्य मुरा संज्ञस्य पुत्रं मौर्याणां प्रथमम्"। यह तो केवल मौर्य्य नाम

---

* Asoka P. 104

की कल्पित उत्पत्ति बताने का यत्न है, और यह भी ठीक मालूम नहीं होता कि संस्कृत-व्याकरण के अनुसार मुरा की सन्तान मौरेय शब्द से अभिहित होगी न कि 'मौर्य्य' से। सभी संस्कृत ग्रन्थों में, जिनमें मौर्य्य वंश का प्रसंग आया है चन्द्रगुप्त द्वारा स्थापित राजवंश को मौर्य्य नाम से ही अभिहित किया है। *गिरनार वाले रुद्रदमन के शिलालेख में भी इसी शब्द का इसी वंश के लिये दो बार प्रयोग हुआ है।*

विष्णु पुराण की उक्त टीका में भी मुरा या चन्द्रगुप्त की नीच उत्पत्ति का कहीं कुछ उल्लेख नहीं है। मुरा को नीच जाति की बताकर, और मौर्य राजाओं को उसकी सन्तान कह कर नीच कुलोत्पन्न कहना तो केवल अठारहवीं शताब्दी में ढुंढिराज का ही काम मालूम होता है। वास्तव में 'नन्द-मुरा' के आख्यान और इस प्रकार चन्द्रगुप्त के नीच जन्मा होने की धारणा का कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है। हमने अपनी पुस्तक 'चन्द्रगुप्त मौर्य्य' में इस तथ्य की सविस्तार चर्चा की है, कि चन्द्रगुप्त नन्द वंशीय नहीं था, वरन् वह मौर्य्य-कुल, इक्ष्वाकु वंशीय क्षत्रिय थे, और चन्द्रगुप्त का मूल निवास-स्थान पश्चिमोत्तर भारत या गांधार देश था।

चन्द्रगुप्त का शासन-काल २४ वर्ष तक रहा, अर्थात् ३२५ ईसा पूर्व से लेकर ३०१ ई० पूर्व तक रहा। उसके पश्चात् उसका पुत्र बिन्दुसार सिंहासनारूढ़ हुआ। बिन्दुसार को पूर्णरूप से सुसंगठित विशाल मौर्य्य साम्राज्य प्राप्त हुआ। उसके विषय में अभी तक कुछ अधिक पता नहीं चला है। परन्तु इसमें सन्देह

नहीं, कि वह एक शक्तिशाली सम्राट हुआ है, क्यों कि उसके समय मे भी विशाल मौर्य्य साम्राज्य ज्यों का त्यों बना रहा, और तिब्वतीय इतिहासकार तारानाथ के लेखो के अनुसार, उसने भी स्वय कुछ नये प्रदेश जीत कर मौर्य्य साम्राज्य में मिलाये। प्राचीन योरोपीय इतिहासकारों ने भी विन्दुसार को 'अमित्रघात' की उपाधि से भूषित किया है। उनके लेखों से यह भी पता चलता है कि उस का चन्द्रगुप्त के समान सीरिया आदि देशों के अधिपतियों से घनिष्ट सम्बन्ध था और उनके दूतादि भी उनके दरबारों में आया-जाया करते थे। विन्दुसार का शासन-काल २८ वर्ष रहा, जो ३०१ ई० पू० से लेकर २७३ ईसा पूर्व तक रहा। विन्दुसार के पश्चात् उसका जगत् विख्यात पुत्र अशोक विशाल मौर्य्य साम्राज्य का उत्तराधिकारी हुआ।

अध्याय २

अशोक का प्रारम्भिक जीवन

उत्तर भारत और सीलोन में प्राप्त बौद्ध पाली-ग्रन्थों में अशोक के प्रारम्भिक जीवन की बहुत सी घटनाओं का उल्लेख है, जिनमें बहुधा यह बताने का प्रयत्न किया गया है, कि अशोक पहले क्रूर और निर्दयी था, परन्तु बौद्ध मत ग्रहण करने के पश्चात्, उसका हृदय अत्यन्त सरल तथा धर्म की कोमल भावनाओं से परिपूर्ण होगया था। सीलोन में प्राप्त पाली-ग्रन्थों में लिखा है, कि बिन्दुसार की सोलह रानियां थीं, जिनसे उसके १०१ पुत्र उत्पन्न हुए। इनमें सब से बड़े का नाम सुमन था, और सब से छोटे का नाम तिष्य था। अशोक और तिष्य एक माता के पुत्र थे। बिन्दुसार के मरने के पश्चात् अशोक ने अपने ९९ भाइयों का वध कर सिंहासन प्राप्त किया था। उसके भाइयों में से केवल तिष्य ही जीवित बचा रहा।

अपने ९९ भाइयों का वध कर अशोक के सिंहासन प्राप्त करने की उक्त कथा सत्य नहीं मालूम होती। इसके विपरीत उस के शिला लेखों से अपने भाइयों के प्रति उसकी सहृदयता प्रकट होती है। इसके अतिरिक्त उत्तर भारत के बौद्ध ग्रन्थ दिव्यावदान

के अनुसार अशोक के केवल तीन भाई थे। बिन्दुसार की एक रानी से सुसीम था, जो उनमें सब से बड़ा था। सम्भवतः सुसीम सीलोन के बौद्ध ग्रन्थों का सुमन रहा हो। बिन्दुसार की दूसरी रानी सुभद्रांगी से, जो चम्पा के एक ब्राह्मण की सुन्दर कन्या थी, उसके दो पुत्र अशोक और विगताशोक हुए*। सम्भवतः विगताशोक सीलोन के ग्रन्थों का तिष्य हो।

अपने पिता के शासन काल में अशोक ने सफलता पूर्वक तक्षशिला में एक विद्रोह का दमन किया। उसके कुछ समय पश्चात् तक्षशिला के एक अन्य विद्रोह को दमन करने में उसका बड़ा भाई असफल रहा। इस से अवश्य ही अशोक की असाधारण योग्यता सिद्ध हुई होगी, और कदाचित् इसी कारण उसके पिता ने उसे अपना उत्तराधिकारी नियत किया हो। ऐसा प्रतीत होता है, कि सिंहासन प्राप्त करने पर उसके भाई सुसीम (सुमन) ने उसका विरोध किया, और सम्भवतः उत्तराधिकार के लिये जो युद्ध हुआ उसमें वह मारा गया।

पाली के बौद्ध ग्रन्थों से मालूम होता है, कि अपने पिता के समय में ही, लगभग पन्द्रह वर्ष की आयु में अशोक उज्जैन का प्रतिनिधि शासक नियुक्त कर भेजा गया था। उज्जैन में रहते हुए विदिसा (भोपाल के पास आधुनिक भेलसा) निवासनी, देवी नाम की एक उच्च जाति की अत्यन्त सुन्दरी युवती से उसका

---

* सीलोन के ग्रन्थ महावंशटीका के अनुसार अशोक की माता का नाम धर्मा था, जो क्षत्रिय कुल मौर्यवंश की ही एक कन्या थी।

प्रेम हो गया। वह अशोक के साथ उज्जैन गयी. और वहां उनके पुत्र 'महेन्द्र' और पुत्री 'संघमित्रा' का जन्म हुआ। अशोक के राजसिंहासन प्राप्त करने पर देवी विदसा में ही निवास करने लगी, परन्तु महेन्द्र और संघमित्रा अपने पिता के साथ पाटलिपुत्र चले गये।

सीलोन के बौद्ध ग्रन्थों से पता चलता है, कि अपने पिता की मृत्यु के चार वर्ष पश्चात अशोक का राज्याभिषेक हुआ। हम ऊपर बता चुके हैं, कि बिन्दुसार का शासन काल २७३ ई० पूर्व तक रहा। इस से विदित होता है, कि २६६ ईसवी पू० के लगभग अशोक का राज्याभिषेक हुआ। उक्त ग्रन्थों से यह भी पता चलता है, कि अशोक बुद्ध निर्वाण से २१८ वर्ष बाद सिंहासन पर बैठा। इस प्रकार बुद्ध निर्वाण की तिथि लगभग ४८७ ई० पूर्व निश्चित होती है। अशोक का शासन काल ३७ वर्ष अथवा लगभग २३२ ई० पूर्व तक रहा।

अध्याय ३

अशोक, शासक और विजेता

अशोक ने अपनी युवावस्था ही में विशाल मौर्य्य साम्राज्य का आधिपत्य ग्रहण किया। इस साम्राज्य का विस्तार आजकल के भारतीय साम्राज्य से लगभग दुगना था। दक्षिण में चोड, पाण्ड्य, केरल आदि कुछ छोटे छोटे प्रजातन्त्र राज्यों को छोड़कर लगभग समस्त भारत इसके अन्तर्गत था। इसके अतिरिक्त समस्त अफगानिस्तान, पूर्वीय परशिया, रूसी और चीनी तुर्किस्तान आदि मध्य एशिया का बहुत बड़ा भाग भी मौर्य्य साम्राज्य में शामिल था ❀। जैसा कि पहिले अध्याय में भी बताया गया है, अशोक के पितामह सम्राट चन्द्रगुप्त के समय में ही मौर्य्य

❀ इस विषय की चर्चा हमने निम्नलिखित लेखों में की है।

(1) 'Central Asiatic Provinces of Mauryan Empire' Indian Historical Quarterly Vol XIII

(2) The Kingdom of Khotan (Chinese Turkestan) under Mauryas Indian Historical Quarterly Vol XV

इसकी सविस्तार चर्चा हमने अपनी पुस्तक 'चन्द्रगुप्त मौर्य' में भी की है।

साम्राज्य का विस्तार बहुत कुछ उक्त सीमा तक पहुंच चुका था, और चन्द्रगुप्त तथा चाणक्य द्वारा उसके शासन-प्रबन्ध का ढांचा भी एक उपयुक्त साचे में ढल गया था।

शासन-विधान के लिये, विशाल मौर्य्य साम्राज्य पूर्वी प्रान्त के अतिरिक्त चार बडे बडे प्रान्तों में बाँट दिया गया था। प्रत्येक प्रान्त के संरक्षण के लिये कोई राजपुत्र ही प्रतिनिधि शासक नियुक्त किया जाता था। पूर्वीय भारत का शासन तो स्वयं सम्राट द्वारा ही पाटलिपुत्र से होता था। इसके अतिरिक्त उत्तर भारत में कौशाम्बी और तक्षशिला दो मुख्य प्रतिनिधि शासन केन्द्र थे। तक्षशिला के अन्तर्गत समस्त पंजाब, गान्धार और मध्य एशिया के प्रान्त थे। खोतान का इलाका भी सम्भवत इसी में सम्मिलित रहा हो। मध्य भारत में उज्जैन मुख्य प्रतिनिधि शासन केन्द्र था। यहा, जैसा हम ऊपर बता आये हैं, एक बार अशोक को ही वायसराय नियुक्त कर भेजा गया था। दक्षिण भारत का मैसूर, और कलिंग देश का तोसली नामक नगर मुख्य शासन केन्द्र थे।

अशोक ने सम्राट पद ग्रहण करते ही बड़े उत्साह पूर्वक इस विशाल साम्राज्य का शासन-प्रबन्ध अपने हाथ में लिया, और उसकी उपयुक्त व्यवस्था के लिये उसने अथक परिश्रम किया। अशोक के इस परिश्रम का ठीक ठीक विवरण उसके शिलालेखो मे मिलता है। पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त से लेकर उडीसा तक, तथा समस्त उत्तरीय और दक्षिण भारत के विभिन्न स्थानों में, चट्टानो और पत्थर के स्तम्भों पर यह लेख उत्कीर्ण है। भारतीय तथा योरोपीय विद्वानो के कठिन परिश्रम के पश्चात्, आज हमको इन

लेखों के विषय के सम्बन्ध में भली भांति ज्ञात होगया है। आगे चलकर हम इसका सविस्तार विवरण देंगे।

यह शिलालेख अनेक बातों में अशोक के व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप से हमारे सामने व्यक्त करते हैं। इनके अनुसार अपने शासनकाल के प्रारम्भिक आठ वर्षों में अशोक अपने पितामह शक्तिशाली विजेता तथा महान शासक, चन्द्रगुप्त के समान, विशाल मौर्य्य साम्राज्य की शासन-व्यवस्था में संलग्न रहा, और उसके साथ ही अपने साम्राज्य का विस्तार बढ़ाने का भी प्रयत्न करता रहा, उसने इन आठ वर्षों में सड़कें, नहरें और कुएँ बनवाये वृक्ष लगवाये, औषधालय खोले, वृद्धों और दुर्बलों की सहायता आदि का प्रबन्ध किया।

अशोक के प्रारम्भिक शासनकाल की सब से महत्वपूर्ण घटना, उसका कलिंग पर आक्रमण था। यह आक्रमण उस के अभिषेक के आठ वर्ष पश्चात् हुआ, और ऐसा प्रतीत होता है कि उसका संचालन स्वयं उसी ने किया। उसने कलिंग पर विजय प्राप्त कर उसको अपने साम्राज्य में मिलाया। अशोक ने किस विचार से कलिंग पर आक्रमण किया इसका ठीक ठीक पता नहीं चलता। सम्भवतः भारत में जो कुछ छोटे छोटे स्वतन्त्र राज्य मौर्य्य साम्राज्य के बाहर रहगये थे, उनको भी, उस विशाल साम्राज्य में मिलाने के विचार से ही अशोक ने कलिंग युद्ध आरम्भ किया होगा। हमको उसके शिलालेखों से ज्ञात होता है, कि उस में महान विजेताओं के समान पराक्रम और उत्साह के लक्षण पहले से ही वर्तमान थे। कलिंग युद्ध में सफलता प्राप्त करने के पश्चात्

भी, यदि वह अपने उसी विजयी जीवन को जारी रखता, तो अवश्य ही दक्षिण के चोड़, पांड्य आदि छोटे छोटे राज्यों पर भी विजय प्राप्त कर लेता। परन्तु नियति का विधान तो कुछ दूसरा ही था।

———

अध्याय ४

अशोक के जीवन में परिवर्त्तन

अशोक ने कलिंग पर विजय तो अवश्य प्राप्त की, परन्तु वह एक भीषण हत्या-काण्ड के अतिरिक्त कुछ और न था। एक शिलालेख से मालूम होता है, कि इस युद्ध में लगभग डेढ़ लाख आदमी क़ैदी बनाकर वहां से बाहर भेजे गये। लगभग डेढ़ लाख रणभूमि में मारे गए, और इससे कहीं अधिक युद्ध के परिणाम-स्वरूप अकालादि से मरे। कलिंग युद्ध के इस संहार और इसकी विभीषिका का अशोक पर विपरीत प्रभाव पड़ा, जिसके कारण उसके जीवन-सम्बन्धी दृष्टिकोण में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण परिवर्तन उत्पन्न हुआ। इसके पश्चात् उसके हृदय में, युद्ध के द्वारा विजय प्राप्त करने के सिद्धान्त का स्थान, प्रेम और दया द्वारा विजय प्राप्त करने के सिद्धान्त ने ले लिया। इस नैतिक विजय को प्राप्त करने में भी अशोक ने अब उसी संलग्नता और उत्साह से कार्य करना प्रारम्भ किया, जिससे उसने पिछले आठ वर्षों में अपने विशाल साम्राज्य के शासन-विधान की व्यवस्था की थी, और नये प्रदेश पर विजय प्राप्त की थी। समस्त भारत और दूर-दूर के अन्य देशों में अशोक ने इस नयी नैतिक विजय को

प्राप्त किया। उसने अपनी एक राजकीय घोषणा में लिखा है:—

"कलिंग युद्ध में जितने भी व्यक्ति मारे गये हैं, उनका सौवाँ या हजारवाँ भाग भी यदि अब मारा जायगा, तो यह महा खेद का विषय होगा। देवानांप्रिय की हार्दिक इच्छा है, कि प्राणीमात्र को हानि पहुंचाने से अपने आपको रोकना चाहिए। वह नैतिक विजय ही को सब से प्रधान विजय मानता है, और उसे उसने अपनी प्रजा तथा पड़ौसी देशों में बराबर प्राप्त किया है। इसके अतिरिक्त इस विजय की दुंदुभि छै सौ योजन तक बजी, जहां यवन राजा अन्तियोक (सीरिया का एंटिओकस तृतीय) राज करता है। इसके और आगे तक भी इस विजय का प्रभाव उन प्रदेशों तक पहुंचा, जहां चार अधिपति, तुरमय (इजिप्ट का टालमी द्वितीय) अंटकिनि (मैसेडोनिया का एंटिगोनस गोनट), मक (सीरीन का मेगस) और अलेक्जेन्द्र (इपिरस या कोरिन्थ का एलेक्ज़ेण्डर) शासन करते हैं। दक्षिण मे इस विजय की पताका चोड़ और पाण्ड्य देश तक फहराई। अपनी इस प्रत्येक स्थान पर और अनेक बार प्राप्त की हुई विजय पर उसे बहुत सन्तोष हुआ। यह नैतिक लेख केवल इसी कारण उत्कीर्ण कराया गया है कि उसके पुत्र और पौत्र कोई नवीन सांग्रामिक विजय प्राप्त करने का विचार न करें। यदि कोई ऐसी विजय प्राप्त करना अनिवार्य ही हो तो उन्हें दया करने और साधारण दण्ड देने मे ही प्रसन्नता होनी चाहिए, और वे नैतिक विजय ही को केवल वास्तविक विजय समझें।"

कलिंग युद्ध के पश्चात् अशोक के जीवन का सर्वोच्च

ध्येय मनुष्यमात्र की भलाई करना ही हो गया था। इस समय मे उसके हृदय में अपनी और अपने पड़ौसी राज्यों की प्रजा मे स्थायी सम्पन्नता और शान्ति स्थापित करने की उत्कट आकांक्षा का प्रादुर्भाव हुआ। इन राज्यों में सुदूर ग्रीक राज्य तक थे। उसने प्रजा की इस सम्पन्नता तथा शान्ति के केवल उपकारी शासन विधानों द्वारा ही नहीं वरन् नैतिक शिक्षाओं द्वारा भी स्थापित करने का यत्न किया।

उसने अपनी समस्त शक्ति के उक्त महान ध्येय पर केन्द्रित किया। अपनी एक राजकीय घोषणा में उसने लिखा है, "मुझे उद्योगों में संलग्न रहने, और कार्यों के सम्पादन से कभी तृप्ति नहीं होती। मैं मनुष्य मात्र का सुख और उनकी शान्ति की अभिवृद्धि ही अपना कर्तव्य समझता हूं, क्यों कि मनुष्य मात्र के सुख और शान्ति की अभिवृद्धि से अधिक महत्वपूर्ण अन्य कोई कार्य नहीं है।" प्रत्येक समय, दिन हो या रात प्रजा अपनी शिकायतें सुनाने के लिए, उसके निकट पहुंच सकती थी। उसने अपने सूबेदारों के ईर्ष्या, क्रोध, निर्दयता और आलस्य से दूर रहने, और भरसक प्रजा की सेवा करने का पूर्ण आदेश दिया था। उसने विशेष कर्मचारियों के समस्त देश का चक्कर लगाते रहने के लिये नियुक्त किया। जो सदा यह देखते रहते थे, कि प्रजा पर कोई अन्याय ते नहीं होता है, या उसको किसी प्रकार की क्षति ते नहीं पहुंचायी जाती है। उसने अपनी आमोद-प्रमोदमयी यात्राओं के भी नैतिक यात्राओं में परिणत कर दिया था। यह यात्राएं अब निम्नलिखित प्रगतियों से पूर्ण होतीं। वह ब्राह्मणों

और श्रमणों से भेट करता, और उन्हें उपहार देता। वृद्धों और दुर्बलों को जाकर देखता, और उनकी सहायता करता। लोगों से मिल कर उनसे उनकी भलाई के बारे में प्रश्न करता और उन्हें नैतिक शिक्षा देता। उस ने धर्ममहामात्रों की नियुक्ति की, जो उसके नैतिक धर्म का समस्त सम्प्रदायों में प्रचार करते थे। धर्ममहामात्र वन्दियों की सहायता करते थे, और जिन वन्दियों के कुटुम्ब में बच्चे या वृद्ध थे, उनकी मुक्ति कराते थे। वे राजधानी तथा साम्राज्य के अन्य बडे बडे नगरों में सम्राट और उसके कुटुम्बियो को पीडित और दरिद्र लोगो को दान देने में सहायता देते थे।

अशोक की धर्म शिक्षा में शिष्टता, सौजन्य और सेवा भाव कूट-कूट कर भरे थे। उसने नैतिक सत्य को ही संसार के सामने सर्वोत्कृष्ट रखा, जैसा कि उसने लोगो को बताया कि कठोरता, क्रोध निर्दयता, अभिमान और द्वेष पाप का मूल है। उसका कहना था, कि कोई व्यक्ति कितना भी बडा क्यों न हो, परन्तु जब तक उसमें संयम, विचार की पवित्रता, कृतज्ञता, दृढ भक्ति आदि गुणो का अभाव है, तब तक वह नीच है। वह निरन्तर लोगों को इस बात का ध्यान दिलाता था, कि अच्छे काम करने की प्रवृत्ति सदाही उनके हृदय में बलवती रहनी चाहिये। वह दया भाव पर सब से अधिक बल देता था। उसका यह दया भाव केवल मनुष्यों पर ही नहीं, वरन् पशु-पक्षियो के प्रति भी था। दैनिक जीवन में वह चाहता था, कि लोग माता पिता और वृद्ध जनों की सेवा करें। मित्रों, सम्बन्धियों, ब्राह्मणों, श्रमणों, दरिद्र

और पीड़ित मनुष्यों की सहायता दें। देख भाल कर खर्च करें, और अधिक द्रव्य संचय का यत्न न करें।

बहुधा देखा गया है, कि कोई कोई घटना मनुष्य के जीवन में बड़ा परिवर्तन कर देती है। एक शक्तिशाली सम्राट के जीवन में एक युद्ध से कितना परिवर्तन हुआ। नियति ने अशोक को एक महान विजेता होने का विधान ही नहीं रचा था, प्रत्युत उसने उसे विश्वव्यापी प्रेम, शान्ति और भ्रातृत्व का शाही पैगम्बर बनाया।

अध्याय ५

अशोक के धार्मिक विचारों का विकास

अशोक के जीवन में सहसा ही महान परिवर्तन हुआ। यदि उसके कारण पर विचार किया जाय, तो यह स्पष्ट हो जाता है, कि किसी विशेष सम्प्रदाय का उस पर इतना प्रभाव नहीं पड़ा था, जितना कि कलिंग युद्ध का। इस युद्ध के पश्चात् अशोक की मनसिक मनोवृत्ति में जो परिवर्तन हुआ, यही उसके बौद्ध धर्म की ओर प्रवृत्त होने का वास्तविक कारण था। उसने सम्भवतः प्रथम धर्म सम्बन्धी अपने निजी सिद्धान्त बनाये, और वे बुद्ध भगवान् की शिक्षाओं से बहुत ही अधिक मिलते-जुलते थे। उनमे समस्त मानव जीवन के प्रति प्रेम तथा दया भाव और मनुष्य मात्र की सेवा का आदेश दिया गया था।

इतिहास वेत्ताओं ने बहुधा यह प्रश्न उठाया है, कि उक्त परिवर्तन के पहले अशोक किस धर्म का अनुयायी था। अशोक के समय से लगभग ढाई सौ वर्ष पूर्व भारत मे तीन नवीन धार्मिक सम्प्रदायो, बौद्ध, जैन, और आजीविक की नींव बुद्ध,

प्राचीन ब्राह्मणीय वैदिक धर्म को ही मानती थी। यह नवीन धार्मिक सम्प्रदाय वैदिक धर्म से पृथक न थे। इसके विपरीत तथ्य को मानना एक बड़ी ऐतिहासिक भूल होगी। वैदिक धर्म तथा सभ्यता रूपी एक ही वृक्ष की यह भिन्न भिन्न शाखाऐं थीं। जिस प्रकार भगवान् बुद्ध और महावीर के जीवन काल में ही बिम्बिसार और अजातशत्रु इन आचार्यों का समान आदर करते थे, इसी प्रकार उनके उत्तराधिकारियों ने भी इन विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों की आदर सहित रक्षा की। महानन्दि के समय, सम्भवतः उसकी ही देख-रेख में बौद्धों की दूसरी बृहन् सभा हुई। महापद्मनन्द सम्भवतः जैन सम्प्रदाय का अनुयायी था। पुनः चन्द्रगुप्त मौर्य्य के समय में प्राचीन ब्राह्मणीय शैली के अनुसार पटलिपुत्र से एक विशाल साम्राज्य की स्थापना हुई। यह जैन परम्परा भी सत्य हो सकती है, कि बाद में चन्द्रगुप्त तथा उसके गुरु चाणक्य दोनों ही जैन मुनि बन गये थे।

इसमें कोई सन्देह नहीं, कि अशोक पर, उसके प्रारम्भिक जीवन काल में ब्राह्मणीय आदर्शों के साथ-साथ बौद्ध, जैन तथा आजीवकों की शिक्षाओं का भी थोड़ा बहुत प्रभाव पड़ा होगा। पाली के ग्रन्थों से पता चलता है, कि अपने पिता बिन्दुसार के समान अशोक भी सिंहासनारूढ़ होने के पश्चात् हजारों ब्राह्मणों को भोजनादि दे उनका पोषण किया करता था। कतिपय विद्वानों के अनुसार अशोक के शिला लेखों में, कुछ स्थानों पर, जैन शिक्षाओं का प्रभाव विदित होता है। बाद में अशोक पूर्णतया बौद्ध धर्म का अनुयायी हुआ, यह तो निर्विवाद है।

अशोक के शिला लेखों से यह भी स्पष्ट ज्ञात होता है, कि बौद्ध धर्म में उसकी अगाढ़ श्रद्धा होते हुए भी वह उदारता पूर्वक सभी धार्मिक सम्प्रदायों में दिलचस्पी लेता रहा, और उनका यथोचित् आदर भी करता रहा। वह चाहता था, कि समस्त सम्प्रदयों के लोग सभी स्थानों पर निवास करें, क्यों कि उसके अनुसार सभी सम्प्रदायों में संयम और मानसिक पवित्रता का विशेष स्थान है। वह समस्त सम्प्रदायों के अच्छे सिद्धान्तों की उन्नति चाहता था, और उसकी हार्दिक इच्छा थी, कि सभी विभिन्न धर्मावलम्बी परस्पर मिल-जुल कर रहें। यह उसकी निम्न लिखित राजकीय घोषणा से बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है। "वह विभिन्न प्रकार के उपहारों से और साथ ही उनका सम्मान कर, समस्त धार्मिक सम्प्रदायों का आदर करता है। परन्तु उसके निकट इन उपहारों और सम्मान का इतना मूल्य नहीं, जितना कि विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों के सार-तत्व के उपयुक्त परिवर्द्धन का। यदि कोई भी व्यक्ति अपने सम्प्रदाय की प्रशंसा करता है, और दूसरे सम्प्रदायों की निन्दा तो वह अपने सम्प्रदाय को बहुत हानि पहुंचाता है। जनता को पारस्परिक-धार्मिक विचारों को सुनना चाहिए, और उनका मनन करना चाहिए। उसकी हार्दिक इच्छा है, कि समस्त धर्म ज्ञान के भण्डार हों। उनके सिद्धान्त पवित्र तथा आडम्बर रहित हों, और समस्त धर्मों के सारतत्व का परिवर्द्धन तो अवश्य ही हो।

अशोक के जिन उत्कीर्ण लेखों में उसके उपहारों की चर्चा हुई है, उनमें भी समस्त धार्मिक सम्प्रदायों के प्रति उसकी उदारता

अध्याय ६

अशोक की बौद्ध धर्म दीक्षा

पाली के बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार अशोक ने अपने शासन काल के चौथे वर्ष में बौद्ध धर्म ग्रहण किया। परन्तु उसके शिलालेखों से जो अधिक प्रमाणित हैं, यह स्पष्ट है, कि कलिंग युद्ध के पश्चात् अर्थात् अपने शासनकाल के नवें वर्ष के बाद मे ही अशोक में धार्मिक परिवर्तन हुआ। हम पिछले अध्याय मे यह बता आये हैं, कि कलिंग युद्ध के पश्चात ही प्रथमवार अशोक बौद्ध धर्म की ओर आकृष्ट हुआ। जैसा कि हम आगे चल कर बतायेंगे, उसके शिलालेखों से यह भी मालूम होता है, कि ज्यों ज्यों उसकी आयु बढती गयी, त्यों त्यो बुद्ध भगवान् तथा उन की शिक्षाओं में उसकी श्रद्धा प्रगाढ होती गयी। अपने जीवन के पिछले दस वर्षों में ही अशोक ने प्रकट रूप से बौद्ध धर्म ग्रहण किया, और ससार भर में उसको फैलाने का उसने भरसक यत्न किया।

कलिंग युद्ध के दो वर्ष पश्चात्, अथवा अपने शासनकाल के ग्यारहवें वर्ष में अशोक ने 'सम्बोधि' अर्थात् गयाजी की यात्रा की। यहीं बुद्ध भगवान् ने ज्ञान प्राप्त किया था। उत्तर भारत के

बौद्ध-ग्रन्थ 'दिव्यावदान' में भी अशोक की इस यात्रा का जिक है। उस में लिखा है, कि आचार्य उपगुप्त के साथ अशोक ने यह यात्रा की, और वहां उसने एक लाख स्वर्ण मोहरें दान दी। अशोक के शिलालेखों से यह पता चलता है, कि यह यात्रा ही अशोक का ऐसा प्रथम कार्य है, जिस से बौद्ध धर्म की ओर उस का झुकाव ज्ञात होता है। परन्तु इस यात्रा में भी उस ने श्रमणों के साथ साथ ब्राह्मणों के दर्शन किये, और उनको दानादि दिया *। इस यात्रा से अशोक की बौद्ध धर्म की ओर श्रद्धा बढ़ती प्रकट तो होती है, परन्तु साथ ही साथ यह भी मालूम होता है, कि इस समय तक वह भिन्न भिन्न धार्मिक सम्प्रदायों को समान दृष्टि से देखता था। इसी प्रकार अशोक ने अपने शासनकाल के प्रथम बीस वर्षों में जो अन्य लेख खुदवाये, उनसे भी स्पष्ट विदित होता है, कि बौद्ध धर्म के साथ साथ वह अन्य धर्मों की शिक्षाओं में भी दिलचस्पी लेता रहा, और उनकी उन्नति का प्रयत्न करता रहा। जैसा कि हमने पिछले अध्याय में बताया है, उसने इस समय की अपनी एक राजकीय घोषणा में लिखा है, कि "वह उपहारों और विभिन्न सम्मानों से समस्त धार्मिक सम्प्रदायों का आदर करता है। परन्तु उसके निकट इस उपहार और आदर का इतना मूल्य नहीं, जितना कि विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों के सार तत्व के उपयुक्त परिवर्द्धन का। यदि कोई भी व्यक्ति अपने सम्प्रदाय की

---

* एतय होति माहणसमणनं दसणे च दाने।

(शिलालेख ८ गिरनार)

प्रशंसा करता है, और दूसरे सम्प्रदायों की निन्दा, तो वह अपने सम्प्रदाय को बहुत हानि पहुंचाता है। लोगों को पारस्परिक धार्मिक विचारों को सुनना चाहिये, और उन का मनन करना चाहिये, क्योंकि उसकी हार्दिक इच्छा है, कि समस्त धर्म ज्ञान के भण्डार हों। उनके सिद्धान्त पवित्र तथा आडम्बर रहित हो, और समस्त धर्मों के सार-तत्त्व का परिवर्द्धन हो।" यही बात अशोक के उस समय के दान सम्बन्धी उत्कीर्ण लेखों से प्रकट होती है। बौद्ध स्तूपों को बनवाने के साथ साथ उसने आजीवकों को गुफाओं का दान भी किया।

अशोक के शासनकाल के प्रथम बीस वर्षों में उत्कीर्ण लेखों से यह भी स्पष्ट होता है, कि वह बुद्ध भगवान् की शिक्षाओं को जनता के सामने नहीं रख रहा है, वरन् इन लेखों में बताई हुई नैतिक और धार्मिक शिक्षा को वह अपनी ही शिक्षा कहता है। जैसा कि एक लेख में उसने लिखा है, कि लोग सब जगह उसकी नैतिक शिक्षाओं को मानते हैं। बाहर के देशों में भी जहां उसके भेजे हुए दूत नहीं पहुंचे हैं, वहा भी लोग उसकी धार्मिक शिक्षाओं और धर्म विधान की प्रसिद्धि सुन कर उनका पालन करते हैं *।" कुछ आधुनिक इतिहासवेत्ताओं का विचार है,

* उक्त अनुवादित शिलालेख के अन्तिम भाग का मूल इस प्रकार है—
"सवत्र देवनप्रियस ध्रमनुशस्ति अनुवटति। यत्र पि देवनप्रियस दुत न व्रचति ते पि श्रुतु देवनप्रियस ध्रमवुट विधन ध्रमनुशस्ति ध्रम अनुविधियति अनुविधियिशति च। यो स लधे एतकेन भोति सवत्र विजयो सवत्र पुन विजयो प्रितिरसो, लध भोति प्रिति ध्रमविजयस्पि।
(शि० ले० १३ शहबाज़गढ़ी)

कि यहां नैतिक विजय से अशोक बौद्ध धर्म के प्रचार सम्बन्धी अपने सफल प्रयत्न की ओर संकेत करता है। यह अनुमान ठीक नहीं है। यह मानना ठीक न होगा, कि अशोक के प्रारम्भिक शासनकाल में ही समस्त भारतीय जनता और दूर दूर के देशों के लोगों में भी बौद्धमत फैल गया था। यहां नैतिक विजय से स्वयं अशोक के नये राजनैतिक और साधारण जीवन सम्बन्धी विचारों से ही तात्पर्य्य है, जिनकी चर्चा हम पिछले अध्याय में कर आये हैं।

अपने शासन के बीसवें वर्ष के पश्चात्, अशोक ने जो लेख खुदवाए उनसे उसका बौद्ध धर्म के साथ अधिकाधिक सम्पर्क प्रकट होता है। अपने शासन काल के इक्कीसवें वर्ष में अशोक ने बुद्ध भगवान् के जन्म स्थान 'लुम्बिनीवन' की यात्रा की। इस यात्रा का भी बौद्ध-गया की यात्रा के समान दिव्यावदान में जिक्र आया है। जिसके अनुसार यह यात्रा भी अशोक ने आचार्य उपगुप्त के साथ की, और यहां पर भी उसने एक लाख स्वर्ण मोहरें दान दीं, इस यात्रा की स्मृति में अशोक ने पत्थर का एक स्तम्भ बनवाकर उस पर एक लेख खुदवाया। यह स्तम्भ आजतक नैपाल की तराई में 'रुमिन्देई' नामक तीर्थ स्थान के पास खड़ा है। इस लेख में लिखा है, कि अशोक "अपने अभिषेक के बीस वर्ष पश्चात् इस स्थान पर आया। यहां बुद्ध शाक्य मुनि का जन्म हुआ था अशोक ने इस स्थान की बन्दना की।" इसके थोड़े ही समय पश्चात् उसने 'कोनागमन' के स्तूप की, वहाँ जाकर बन्दना की यह स्तूप रुमिन्देई से थोड़ी दूर पर है, और इसे अशोक ने

अपने शासनकाल के पन्द्रहवें वर्ष मे यज्ञ करवाया था। इस यात्रा की स्मृति के रूप में भी अशोक ने एक स्तम्भ बनवाकर उक्त आशय का उस पर एक लेख उत्कीर्ण कराया। यह बात ध्यान देने योग्य है, कि दस वर्ष पूर्व बौद्ध गया की यात्रा सम्बन्धी, अशोक के लेख में, वहां वन्दना के अनुष्ठान की कोई चर्चा नहीं है। परन्तु अब बुद्ध भगवान् के जन्म स्थान या बुद्ध कोनाकमन के स्तूप की यात्रा के विषय में जो लेख दिये गये हैं, उनमें वन्दना की चर्चा है।

अपने शासन काल के सत्ताइसवें वर्ष के, आस-पास, उत्कीर्ण स्तम्भ लेख में, अशोक ने अपने पिछले वर्षों के शासन सम्बन्धी और नैतिक शिक्षा के प्रचारार्थ किये गये अपने कृत्या का वर्णन किया है। इनमें अन्य बातों के साथ उसने यह भी बताया है, कि सब धार्मिक सम्प्रदायो, जैसे कि बौद्ध सघ, ब्राह्मण, आजीविक, निर्गन्थ (जैन) आदि की देख-रेख के लिये, अशोक ने धर्म महामात्रों की नियुक्ति की। उक्त वाक्य में "बौद्ध सघ' को सब से प्रथम स्थान दिया गया है, इस से प्रतीत हाता है, कि उसके हृदय में सघ के लिये सर्वोपरि स्थान था।

इस प्रकार अशोक ने, अपने शासन काल के इक्कीसवें वर्ष से सत्ताइसवें वर्ष तक के समय में जो लेख खुदवाए, उनसे पता चलता है, कि बुद्ध भगवान् और बौद्ध सघ में अब उसकी श्रद्धा बढती जा रही है। परन्तु इन लेखों से यह भी स्पष्ट होता है, कि उस समय तक अशोक सभी धार्मिक सम्प्रदायों के साथ पूर्व का सा अपना सम्बन्ध रखने का प्रयत्न कर रहा है। इन

लेखों में कोई ऐसी बात नहीं है, जिससे यह प्रकट हो, कि अशोक बौद्ध संघ में सम्मिलित हो गया है, या वह किसी विशेष प्रकार से बौद्ध धर्म के प्रसार का प्रयत्न कर रहा था।

अपने शासन काल के सत्ताइसवें वर्ष के पश्चात् अथवा अपने शासन काल के अन्तिम दस वर्षों में अशोक ने, सारनाथ, साँची और इलाहाबाद के स्तम्भों पर निम्न लिखित आशय का लेख खुदवाया।® "महामात्रों को आज्ञा है, कि बौद्ध संघ सदा के लिये एक कर दिया गया है संघ को तोड़ने का कोई यत्न न करे। यदि कोई भिक्षु या भिक्षुणी ऐसा करे उस को स्वेत वस्त्र पहना कर बाहर करदिया जाय।"

उक्त लेख से स्पष्ट विदित होता है, कि अशोक का, इसके उत्कीर्ण करवाने के समय बौद्ध संघ से बहुत घनिष्ट सम्बन्ध हो गया था। वह संघ के नेता के समान, संघ के तोड़ने के प्रयत्न पर भिक्षु और भिक्षुणियों के लिये दण्ड का विधान करता है। अशोक की आज्ञा से संघ के सिद्धान्तों को न मानने पर भिक्षु और

® इन लेखों में अशोक ने अपने शासन काल की कोई तिथि नहीं दी है, परन्तु इलाहाबाद के स्तम्भ पर यह लेख; अपने ही ढंग में लिखा हुआ है। इसके अतिरिक्त अन्य लेखों के नीचे बाद में और ही प्रकार से लिखा गया है। इससे यह निर्विवाद है, कि सारनाथ साँची और इलाहाबाद का यह लेख अशोक के शासन काल के अट्ठाइसवें से लेकर सैंतीसवें अथवा उसके शासन काल के अन्तिम दस वर्षों में खुदवाया गया था।

भिक्षुणियों को संघ से निकालने की बात पाली के ग्रन्थो में भी मिलती है।

कलकत्ता वैराट अथवा भाब्रू नाम के एक छोटे शिला लेख में अशोक ने यह भी बताया है कि बुद्ध भगवान् की ठीक ठीक शिक्षाएं किन ग्रन्थों में दी हुई हैं। लेख इस प्रकार है:-"मगध का राजा प्रियदर्शी संघ का अभिवादन करता है, और आशा करता है, कि संघ के सब लोग सकुशल हैं। यह तो आपको ज्ञात ही है, कि मेरे हृदय में बौद्ध धर्म और संघ के प्रति कितना मान और श्रद्धा है। वैसे तो जो कुछ बुद्ध भगवान् ने कहा है, वह अच्छा ही कहा है, परन्तु मैं अपना यह कर्तव्य समझता हूं, कि आपको बताऊँ कि मेरे अनुसार भगवान का बताया हुआ सत्य धर्म, जो चिरस्थायी रहेगा, निम्न लिखित ग्रन्थों में निहित है। :-(१) विनय-समुकस (२) आर्य्यवंश (३) अनागतभय (४) मुनिगाथा (५) मूनिसूत्र (६) उपतिष्य प्रश्न (७) राहुलवाद, जिसे भगवान् बुद्ध ने झूठ बोलने के विषय में कहा है।"मेरी इच्छा है, कि आपस में मिल कर भिक्षु और इसी प्रकार भिक्षुणियाँ भी इन ग्रन्थों को पढ़ें, और इनका मनन करें।" उक्त सब ग्रन्थों का अब पाली की पुस्तकों में पता लग गया है, इनकी हम आगे चल कर चर्चा करेंगे।

उक्त लेख भी अशोक के शासन के उसी समय का लिखा हुआ प्रतीत होता है, जिस समय उसने साँची आदि का ऊपर दिया हुआ लेख खुदवाया था। इससे भी अशोक और संघ का घनिष्ट सम्बन्ध प्रकट होता है।

रूपनाथ आदि के कितने ही स्थानों पर अशोक का एक अन्य छोटा शिला लेख मिला है, जिसकी प्रारम्भिक पंक्तियाँ इस प्रकार हैं:- "ढाई वर्ष से अधिक हुए मैं प्रकटरूप से बुद्ध शाक्य (मुनि) का अनुयायी होगया हूं। इस बीच में पहले तो मैंने कुछ अधिक उत्साह से काम नहीं किया, परन्तु एक वर्ष से अधिक हुआ मैं संघ में सम्मिलित हो गया हूं, और तब से मैंने पूर्ण उत्साह से काम किया है।"

उक्त लेख में भी अशोक ने अपने शासन काल की कोई तिथि नहीं दी है। परन्तु हमारे विचार से यह भी अशोक के अन्तिम दस वर्षों से साँचि आदि और भाब्रू-वैराट के लेखों के समय के आसपास ही खुदवाया गया था।❀ इन लेखों से यह स्पष्ट हो जाता है, कि अशोक पहले तो उपासक के रूप से और पुनः भिक्षु के रूप से बौद्ध संघ में सम्मिलित हुआ। प्राचीन

❀ बहुत से आधुनिक इतिहासवेत्ता इन गौण शिलालेखों को अशोक के सब से प्रथम खुदवाये गये लेख मानते हैं। इस प्रकार उनके अनुसार ये लेख अशोक के प्रधान लेखों से भी पूर्व के हैं। परन्तु ऐसा मानना ठीक नहीं। इस से अशोक के मनोविकास का नितान्त उलटा चित्र बनता है। इसकी सविस्तार चर्चा हमने निम्न लिखित लेख में की है।
"Chronology of Asokan Inscriptions" Journal of Indian History, Vol. XVII, Part III.
इसके लिये हमारी पुस्तक 'चन्द्रगुप्त' मौर्य भी देखिये।

चीनी यात्री श्राइसिंग ने लिखा है, कि उसने भिक्षु वेश में अशोक की एक प्रतिमा देखी। केवल अशोक ही ऐसा सम्राट न था, जो बौद्ध भिक्षु बन गया हो। उसके लगभग तीन सौ वर्ष पश्चात् पश्चिमोत्तर भारत के यवन सम्राट मलिन्द ने भी इसी प्रकार भिक्षु वेश धारण किया था। सम्भवतः ऐसा करने में उसने अशोक ही का अनुसरण किया था।

इस प्रकार अशोक के उत्कीर्ण लेखों से विदित होता है, कि कलिंगयुद्ध के पश्चात् शनैः शनैः अशोक की श्रद्धा भगवान बुद्ध और उनकी शिक्षाओं में बढ़ती गयी। परन्तु सम्भवतः राजनैतिक कारणों और साथ ही साथ समस्त सम्प्रदायों से सहानुभूति होने की वजह से, वह बहुत समय तक प्रकट रूप में किसी विशेष धार्मिक सम्प्रदाय का अनुयायी नहीं हुआ। परन्तु अपने शासनकाल के अन्तिम दस वर्षों में उस ने स्पष्टतया बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया था। ऐसा प्रतीत होता है, कि इन्हीं पिछले दस वर्षों में बौद्ध धर्म ग्रहण करने के पश्चात् ही शाही खजाने से अशोक ने बौद्ध संघ को मनमाना दान दिया। इसका विवरण उत्तरीय भारत तथा सीलोन के बौद्ध ग्रन्थों में मिलता है। चीनी यात्री फाह्यान और बाद में हुवानचांग ने भी अपने समय में पाटलिपुत्र में अशोक द्वारा अवस्थित पत्थर के एक स्तम्भ के विषय में लिखा है। उस में खुदा था, कि अशोक ने तीन बार अपने समस्त साम्राज्य को बुद्ध धर्म और संघ के अर्पण कर दिया, और तीनों ही बार उसको द्रव्य और रत्नादि दे वापिस लिया।

अध्याय ७

अशोक के समय में बौद्ध धर्म का प्रसार

सीलोन में प्राप्त पाली के बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार बुद्ध भगवान् के निर्वाण के पश्चात् से अशोक के समय तक बौद्ध धर्म में कितने ही मतमतान्तर उठ खड़े हुए थे। उनके अनेक दल बन गये थे। उनमें परस्पर का वैमनस्य बहुत ही बढता जाता था। इसको दूर करने के लिये अशोक के शासनकाल में उसके ही परिश्रम से, आचार्य्य मोग्गलीपुत्र* के प्रधानत्व में बौद्धों की तीसरी धर्म महासभा हुई। इसमें अशोक ने स्वयं भाग लिया। सभा मे भिन्न-भिन्न स्थानों के लगभग एक हजार बौद्ध आचार्य्य जमा हुए थे। बड़े वादविवाद के पश्चात् इस सभा ने निश्चय किया, कि कौन-कौन से धर्म ग्रन्थों में बुद्ध भगवान् की असली धार्मिक शिक्षा का प्रचालन था, और कौन सा बौद्ध धर्म सत्य था।† इस प्रकार अशोक के परिश्रम से बौद्ध संघ में पुन एकता स्थापित हुई, और पुन भगवान् के बताये सत्यमार्ग की स्थापना हुई।

---

* उत्तर भारत के बौद्ध ग्रन्थों में मोग्गलीपुत्र को ही उपगुप्त कहा है।

† ये वेही ग्रन्थ मालूम होते है, जिनका अशोक ने अपने एक शिलालेख मे जिक्र किया है, और जिसका वर्णन हम ऊपर दे आए है।

पाली के ग्रन्थों के अनुसार यह महासभा अशोक के शासन के अट्ठारहवें वर्ष में हुई। परन्तु इन ग्रन्थों में अशोक के बौद्ध धर्म ग्रहण करने की घटना को भी उसके शासनकाल के चौथे वर्ष में बताया है, जो वस्तुतः अशोक के शिलालेख के अनुसार उसके शासनकाल के दसवें वर्ष से पूर्व नहीं हुई। इसी प्रकार उक्त ग्रन्थों में इस महासभा के समारोह का समय भी ठीक नहीं दिया गया है। यह महासभा अशोक के शासनकाल के अट्ठारहवें वर्ष के बहुत बाद में हुई है। अशोक के शासन काल के सत्ताइसवें वर्ष तक के उत्कीर्ण लेखों में इस महासभा की कोई चर्चा नहीं है। जैसा हम पिछले अध्याय में बता आये हैं, अशोक का बौद्ध संघ के साथ घनिष्ट सम्बन्ध, उसके शासनकाल के अन्तिम दस वर्षों में हुआ था। उसके लेखों के अनुसार भी, इसी समय, अशोक ने बड़े परिश्रम के बाद संघ में एकता स्थापित की, और इस से अवश्य ही, उसके समय में हुई बौद्ध महासभा का पता चलता है।

इस महासभा के पश्चात् भिन्न भिन्न प्रान्तों और देशों में बौद्ध धर्म प्रचार के लिये निम्न लिखित आचार्य भेजे गये।

(१) मज्झान्तिक — काश्मीर और गान्धार देश
(२) महारक्षित — यवन देश
(३) मज्झिम और कश्यप— हिमदेश
(४) धर्मरक्षित — अपरान्त देश
(५) महादेव — महिसमण्डल (मैसूर)
(६) रक्षित — बनवासि (उत्तर कनारा)

(७) सोन और उत्तर — सुवर्ण भूमि (वर्मा)
(८) महेन्द्र — लङ्का द्वीप (सीलोन)

पाली-ग्रन्थो की उक्त कथा की सत्यता साँची और भेलसा के स्तूपों में रखे प्राचीन समय के पत्थर के डिब्बों पर खुदे हुये लेखों से भी प्रकट होती है। इन डिब्बों में आचार्यों के स्मृति चिन्ह स्वरूप उनके शरीर की भस्म रखी गयी थी। साँची के दूसरे नम्बर के स्तूप के अन्दर एक पत्थर का डिब्बा मिला है। इस डिब्बे के ऊपर कश्यप का नाम लिखा है, और इसको सर्व हिमवन्त देश का आचार्य कहा है। डिब्बे के अन्दर मज्झिम और कश्यप दोनों आचार्यों के नाम लिखे हैं। जीवन भर इन दोनों आचार्यों ने मिलकर काम किया। मृत्यु से पृथक होने के पश्चात् भी इन दोनों के शरीर की भस्म एक ही डिब्बे में रखी गयी। हम ऊपर बता चुके हैं, कि पाली ग्रन्थों के अनुसार भी मज्झिम और कश्यप दोनो आचार्य हिमवन्त देश को भेजे गये थे। यह आकस्मिक घटना नहीं मालूम होती, कि इस पत्थर के डिब्बे पर जिन दो आचार्यों के नाम खुदे हैं, वे ही नाम एक साथ पाली ग्रन्थों में भी मिलते हैं, और दोनों का कार्यस्थल हिमवन्त भी दोनों में साथ साथ है। इसके अतिरिक्त उक्त स्तूप में एक और सफेद पत्थर का डिब्बा मिला है, जिसके अन्दर चार छोटे डिब्बे और रखे हैं। उन में भी कुछ आचार्यों के नाम दिये हैं। इन्हों ने सम्भवतः अशोक के समय की महासभा में भाग लिया था। उन में भी कश्यप और मज्झिम के नाम दिये गये हैं। इस में भी कश्यप को समस्त हिमवन्त देश का आचार्य कहा है। यहां पर आचार्य मोग्गलीपुत्र

का नाम भी है। प्राचीन समय के इन अमिट स्मारक-चिन्हो से अशोक के समय की तीसरी महासभा और उसके समय में कतिपय आचार्यों को बुद्ध भगवान् की धार्मिक शिक्षा को विभिन्न देशो में फैलाने के लिये भेजने की पाली-ग्रन्थों की कथा की सत्यता पूर्ण रूप से सत्य सिद्ध होजाती है। जैसा कि हम पिछले अध्याय में बता आये हैं, अशोक के शिलालेखों से पता चलता है, कि अशोक केवल समस्त भारत मे ही नहीं, वरन् दूर-दूर के देशों में भी अपने नैतिक और धार्मिक विचारो का प्रचार कराया करता था। सीरिया के यवन शासक ऐन्टिओक्स, मिश्र के शासक टोलमी और उन के पास के अन्य यवन राजाओं से अशोक का घनिष्ठ संबन्ध था। अवश्य ही इनके देशों में उस ने कुछ बौद्ध आचार्यों को अपना धर्म फैलाने के लिये भेजा होगा। मिश्र देश में टोलेमी के समय की एक शिला मिली है, उस पर बौद्ध धर्म के चक्रादि चिन्ह उत्कीर्ण हैं *। इसके अतिरिक्त ईसा से पूर्व के थेरापेयती, ऐसनस आदि धार्मिक पन्थों से पता चलता है, कि अशोक के समय में सीरिया, इजिप्ट आदि सुदूर देशों में अशोक के परिश्रम से बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ। इन थारापेयती, ऐसनस आदि धार्मिक पन्थो को कतिपय आधुनिक योरोपीय विद्वानों ने बौद्ध मत का अनुयायी बताया है। §

---

* Journal of the Royal Asiatic Society 1899 P. 875
§ Encyclopædia of Religion and Ethics Vol V P 401 and Vol XII 318-9

' सम्भवतः 'थेरापेयती' अशोक के समय के मान्य बौद्ध-पथ 'थेरावादी' का ही रूपान्तर हो।

पाली-ग्रन्थों में अशोक के पुत्र महेन्द्र और उसकी पुत्री संघमित्रा के भिक्षु तथा भिक्षुणी होने, और लङ्का जाकर बौद्ध के प्रचार करने की कथा सविस्तार दी है। यह कथा संक्षेप में इस प्रकार है।

जब महेन्द्र बीस वर्ष की आयु को प्राप्त हुआ, तो अशोक ने उसे युवराज बनाना चाहा। परन्तु महेन्द्र ने युवराज पद त्याग, बौद्ध भिक्षु बन, बौद्ध धर्म के प्रसार मे अपना जीवन व्यतीत करना निश्चय किया। इसके दो वर्ष बाद, बीस वर्ष की आयु प्राप्त करने पर संघमित्रा ने भी भिक्षुणी वेष धारण किया। महेन्द्र को आचार्य मोग्गलीपुत्र ने दीक्षा दी थी, और संघमित्रा को आयुपाली ने। संघमित्रा के पति अग्निब्रह्म ने भी मोग्गलीपुत्र से दीक्षा ली।

उक्त बौद्ध महासभा के पश्चात् महेन्द्र अन्य पाच भिक्षुओ के साथ विदिसा में अपनी माता से मिलता हुआ लङ्का को गया। लङ्कानरेश तिष्य ने महेन्द्र का अच्छा स्वागत किया, और अपने बहुत से दरबारियो और जनता सहित उसने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया। तिष्य ने महेन्द्र के लिये महाविहार बनवाया। लङ्का की राजकुमारी अनुला और उसके साथ की पाच सौ अन्य स्त्रियों ने भिक्षुणी बनने की इच्छा प्रकट की। परन्तु पुरुष स्त्रियों को दीक्षा नहीं दे सकते थे। तिष्य नरेश ने अपने पुत्र या भतीजे महारिथ द्वारा अशोक को संघमित्रा और साथ ही बोधी वृक्ष की एक डाल को लङ्का भेजने का सन्देश भिजवाया। अशोक ने बड़े दुखित हृदय से सघमित्रा को लङ्का जाने दिया। अशोक ने अपने दरबार और सेनासहित, ताम्रलिप्ति के बन्दर पर आकर सघमित्रा को

विदा किया। लंका पहुंचने पर राजकुमारी अनुला और उसकी एक हजार अन्य सहचरियों को संघमित्रा ने भिक्षुणी बनाया। इस प्रकार धर्म प्रचार के लिये अशोक ने केवल अपनी और अपने विशाल साम्राज्य की सारी शक्ति को ही नहीं लगाया, वरन् अपनी प्रिय से प्रिय वस्तु पुत्र और पुत्री को भी इस शुभ कार्य्य के लिये अर्पण कर दिया।

अध्याय ८

अशोक के समय में देश की उन्नति

यह तो हम ऊपर देख आये हैं, कि मौर्य्य काल में किस प्रकार का एक विशाल साम्राज्य का निर्माण कर उसपर एक सुदृढ़ शासन स्थापित किया गया। बाहरी शत्रु के आक्रमण का भय मिट जाने पर, और इस के साथ ही भीतरी शान्ति स्थापित होने पर, अशोक के समय में भारतवर्ष में वे नवीन धारायें उत्पन्न हुईं, जिन्होंने संसार के मानव जीवन पर अमिट प्रभाव डाला। अशोक के समय में इस धार्मिक उन्नति के साथ साथ, अन्य क्षेत्रों में भी देश में बहुत कुछ उन्नति हुई।

यह तो हम पीछे बता आये हैं, कि अशोक के शासनकाल में जनता के सुख और सुविधा के लिये क्या क्या कार्य हुए। मनुष्यों और पशुओं के लिये चिकित्सालय खुलवाये, सड़कें बनवायीं, और उन पर वृक्ष लगवाये, वाग और कुएँ खुदवाये, आबपाशी के लिये नहरें खुदवायीं, अनाथ बच्चों और स्त्रियों, पीड़ित तथा वृद्धों की रक्षा का प्रबन्ध किया।

जनता की शिक्षा का कार्य मुख्यता बौद्ध-विहारों और अन्य धार्मिक संस्थाओं के ही हाथ में था। विन्सेण्ट स्मिथ का अनुमान

ठीक ही है, कि अशोक के समय में, आजकल की अपेक्षा, जन साधारण में शिक्षा का बहुत अधिक प्रचार था। बर्मा में आज भी इस अनवत दशा में, बौद्ध विहार जनता की शिक्षा का प्रबन्ध करते हैं। वहां १००० में ३७२ स्त्री पुरुष शिक्षित हैं, इसकी अपेक्षा ब्रिटिश इण्डिया में १००० में केवल ७० के लगभग व्यक्ति ही शिक्षित हैं। अशोक के समय में जन साधारण बहुधा लिख पढ सकते थे। इस तथ्य का इस से भी पता चलता है, कि उस ने अपने लेखों को भिन्न-भिन्न स्थानों पर वहीं की भाषाओं में खुद वाया था। उसके ऐसा करने का केवल यही कारण था कि जन साधारण उन्हें पढ सकें।

अशोक ने कितने ही सम्पन्न और सुन्दर नगरा की स्थापना की। काश्मीर की सुन्दर राजधानी श्रीनगर को प्रथमवार अशोक ने ही बसाया था। इसी प्रकार देवपाटन नाम का नगर अशोक ने नैपाल में बसाया।

अशोक ने बहुत से विशाल भवन भी बनवाये। बौद्ध परम्परा के अनुसार समस्त भारतवर्ष में भिन्न भिन्न स्थानों पर इसने अनेक विहार और स्तूप बनवाये, जिनकी सख्या ८४००० बताई जाती है। यह सख्या बढा-चढा कर कही गयी प्रतीत होती है। परन्तु इसमे सन्देह नहीं, कि अशोक ने बहुत से स्तूप और विहार बनवाये। चीनी यात्री हुयानचाग के समय में भी, अर्थात् सातवीं शताब्दी में देश के विभिन्न स्थानों में अशोक के बनवाये बडे बडे स्तूप और विहार मौजूद थे। इनके अतिरिक्त अशोक ने बहुत से भिन्न भिन्न धार्मिक सम्प्रदायों के लिये गुहागृह भी बन

वाये। जिनमें से कुछ का पता चला है।

अशोक के समय भारत में वस्तु कला की उन्नति का ठीक ठीक पता उसके बनवाये हुए शिला-स्तम्भों से स्पष्ट विदित होता है। यह कहना कठिन है, कि अशोक ने ऐसे कितने स्तम्भ बनवाये। हुयानच्वाग के समय में अशोक के बनवाये पन्द्रह स्तम्भ मौजूद थे। अशोक के, सारनाथ साँची आदि में दस स्तम्भों का अब पता चला है। इनका विस्तृत विवरण आगे किया जायगा। इन स्तम्भों के नीचे के भाग की गोलाई लगभग तीन से चार फिट तक है। इन स्तम्भों के शिखर का आकार उलटे कमल या घण्टे के समान होता है, जिसके ऊपरी भागपर, सुन्दर छोटे कमल, हस या चक्र आदि बने होते हैं। अन्य स्तम्भों के ऊपर सिंह, घोड़े, बैल, हाथी आदि की एक बडी मूर्ति बनी होती है। सरजान मारशल ने इनकी बनावट और चित्रकारी के विषय में लिखा है, "यह अपने ढग के अद्वितीय हैं। भारतवर्ष में अब तक इतनी सुन्दर पत्थर पर चित्रकारी नहीं हुई। इतना ही नहीं प्राचीन काल के अन्य किसी देश में भी ऐसी सुन्दर चित्रकारी नहीं पायी जाती *। इसके अतिरिक्त इन स्तम्भों पर बडी चिकनी और चमकदार पौलिश की गयी है। यह पौलिश आज भी आधुनिक इजिनियरों के लिये एक समस्या बनीहुई है।" इन स्तम्भों के निर्माण कार्य और उनकी अद्वितीय पौलिश के विषय में विन्सेण्ट-स्मिथ

---

* Report of the Archelogical Survey of India
१९०४-५ पृ० ३६

ने ठीक ही लिखा है, "इन में संगतराशी की कला अपनी पराकाष्ठा को पहुंच गयी है। उनका निर्माण-कार्य आधुनिक वैज्ञानिक युग में भी सरलता से नहीं हो सकता। यह कितना आश्चर्य जनक है, कि किस प्रकार तीस, चालीस फ़ीट के एक सख्त पत्थर के लम्बे टुकड़े को काट कर साफ़ किया गया, और बड़ी सुन्दरता से उसकी सतह को समतल किया गया। उसके पश्चात् उस पर एक ऐसी पौलिश की गयी, जैसी, कि इस युग में भी पत्थर पर नहीं की जा सकती †।"

यह अनुमान किया जाता है, कि यह स्तम्भ, इलाहाबाद के पास विन्ध्या तथा चुनार में बनाए गये थे। वहां से साम्राज्य के भिन्न-भिन्न स्थानों को भेजे गये। इन में से प्रत्येक स्तम्भ का वजन लगभग १२०० मन है। इनका सैकड़ों मील, जिन स्थानों पर यह खड़े किये गये थे, लेजाना ही बड़ा कठिन कार्य प्रतीत होता है। इस काम की कठिनाई का कुछ अनुमान हम सुल्तान फिरोजशाह तुग़लक के उस परिश्रम से कर सकते हैं, जो उसने सन् १३५६ ईसवी में उन दो स्तम्भों को देहली के आस पास से देहली तक लेजाने में किया। फीरोजशाह के समय का एक इतिहासकार लिखता है, कि फीरोजशाह इन सुन्दर स्तम्भों को देख कर बहुत प्रसन्न हुआ और उसने इनको अपनी राजधानी देहली में ले जाने का निश्चय किया। इनमें से एक को अम्बाला जिले के

---

† Asoka.
पृ० १३६

तोपरा ग्राम से ६० कोस देहली तक लाना था। हजारों मजदूर और फौजी सिपाही इस कार्य में लगाये गये। रूई के गट्ठा पर बड़ी कठिनाई से इसको गिराया गया। फिर फूंस आदि बांध कर इस पर चमड़ा लपेटा गया। बड़े परिश्रम से इसको ४२ पहियों की एक लम्बी गाड़ी पर रखा। यह गाड़ी विशेष रूप से इसी कार्य के लिये बनायी गई थी। प्रत्येक पहिये को खींचने के लिये एक मजबूत रस्सी बांधी गयी थी। प्रत्येक रस्सी को २०० आदमियों ने खेंचा। इस प्रकार (४२×२००) = ८,४०० व्यक्ति खींच कर इसको देहली के पास जमुना के किनारे तक लाये। यहां सुलतान फीरोजशाह ने स्वयं आकर इसका स्वागत किया। पुनः कितनी ही बड़ी-बड़ी नावों में रख कर यमुना के दूसरी पार ले जाया गया। वहा से लेजा कर, बड़े परिश्रम से, फ़ीरोजाबाद के मध्य में सीधा गाड़ा गया। इसी स्थान पर गगन को चुम्बन करता हुआ, और अशोक की महानता की स्मृति दिलाता हुआ यह स्तम्भ आज तक खड़ा है।

अशोक के समय के राज महल और अन्य इमारतें अब नष्ट हो गयी हैं। परन्तु प्राचीन यवन इतिहासकारों ने मौर्य्य समय के महलों को उस समय के संसार के सब से सुन्दर भवन कहा है। उनकी शोभा, मौर्य्य साम्राज्य से पूर्व, विशाल परशियन साम्राज्य के राज्य महलों से भी बढ़ कर थी। यह भी अनुमान किया जाता है, कि अशोक के समय से ही भारतवर्ष में पत्थर की इमारतों के बनाने की प्रथा चली। उससे पूर्व इस कार्य के लिये बहुधा लकड़ी ही काम में लायी जाती थी।

अध्याय ६

अशोक के जीवन का अन्तिमकाल

अशोक सम्बन्धी बौद्ध ग्रन्थों के वृत्तान्त से पता चलता है कि उसके जीवन के अन्तिम वर्ष कुछ दुखमय रहे। यह तो हम एक पिछले अध्याय में बता आये हैं कि किस प्रकार अशोक के पुत्र महेन्द्र और उसके बाद उसकी प्यारी कन्या संघमित्रा उस को छोड़ कर सीलोन चले गये। उसके शासनकाल के तीसवें वर्ष में उसकी प्रिय भार्या और सम्राज्ञी असन्धमित्रा की मृत्यु हो गई। अशोक के समान असन्धमित्रा की भी बौद्ध धर्म में बड़ी श्रद्धा थी, उसकी मृत्यु के चार वर्ष पश्चात् वृद्धावस्था में अशोक ने एक सुन्दर परन्तु चञ्चल युवति तिष्यरक्षिता को अपनी रानी बनाया। तिष्यरक्षिता को बौद्ध धर्म मे प्रेम नहीं था और न वह अशोक की धर्म में इतनी अनुरक्ति को सहन कर सकी। बौद्ध धर्म के विरुद्ध उसने अपमानित व्यवहार करना शुरू कर दिया, जिसमे अशोक को बहुत दुःख हुआ।

उत्तर भारत के बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार तिष्यरक्षिता, असन्धमित्रा से अशोक के जेष्ठ पुत्र, कुनाल पर आसक्त हो गई,

परन्तु कुनाल ने उसके इस अशिष्ट प्रेम को ठुकरा दिया, और सम्भवतः तिष्यरक्षिता से दूर रहने के लिये वह तक्षशिला का वाइसराय होकर चला गया। इस अपमान का बदला लेने के लिये तिष्यरक्षिता ने अशोक का झूठा आज्ञापत्र बना कर एक षड्यन्त्र रच, कुनाल की आंखें निकलवा तक्षशिला से उसको निर्वासित करा दिया। कुनाल अन्धा होने पर अपनी स्त्री सहित भिखारी के समान भ्रमण करते करते पाटलिपुत्र पहुंचा। राजमहल के पास वीणा के साथ उसने वेदनापूर्ण ऊँचे स्वर मे एक मर्मस्पर्शी गाना गाया। अशोक ने अपने पुत्र की सी आवाज सुनने पर उस भिखारी को महल के अन्दर बुलवाया। अपने प्यारे पुत्र को अन्धा, और इस दीन दशा मे देखकर अशोक को बहुत आश्चर्य्य और शोक हुआ। छान-बीन करने पर अशोक को पता चला कि तिष्यरक्षिता के षड्यन्त्र से ही कुनाल अन्धा किया गया था। इस भयंकर अपराध पर तिष्यरक्षिता को मृत्यु का दण्ड मिला।

यह कहना कठिन है कि कुनाल की उक्त कथा कहा तक ठीक है। परन्तु इसमें कुछ न कुछ ऐतिहासिक सत्य अवश्य है, क्योंकि सातवीं शताब्दि में भारत में आये हुये चीनी यात्री हुवान-च्वांग के समय तक्षशिला में कुनाल के नाम का स्तूप मौजूद था, और वहां भी लोगों को कुनाल के अन्धा किये जाने की कथा मालूम थी। विदित होता है कि उक्त घटनाओं के बाद ही अशोक ने भिक्षु वेश धारण किया और उस का बौद्ध संघ से पूर्णतया घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ।

अशोक का अन्तिम जीवन केवल इन घरेलू झगडों से ही

अन्धकारमय नहा बनगया था, परन् विभिन्न बौद्ध कथाओं से विदित होता है कि इसी बीच में राजनैतिक विप्लव भी उठ खड़ा हुआ। हम यह तो एक पिछले अध्याय में बता आये हैं कि किस प्रकार अपने जीवन के अन्तिम वर्षो में अशोक ने अपनी सारी शक्ति बौद्ध धर्म के प्रसार में लगादी। मालूम होता है कि राज्य-कोष को भी उसने असावधानी से इस काम में लगाना शुरू कर दिया। हुवानच्वाँग और उसके पहले फाह्यन ने लिखा है कि उनके समय पाटलिपुत्र में एक स्तम्भ था जिसपर खुदा था कि अशोक ने तीन बार अपने सारे साम्राज्य को, बुद्ध धर्म और सघ के अर्पण कर दिया और तीनों बार खजाने से द्रव्य और रत्नादि देकर उसको वापिस लिया। यह सुगमता पूर्वक विचार किया जा सकता है कि सम्राट् का विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायो में से एक पर इतनी अनुरक्ति दिखाना और साथ-साथ उसपर इतना खर्च करना अशोक के मन्त्रियां को ठीक न लगा होगा। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्हो ने कुछ न कुछ उस का विरोध अवश्य किया होगा। हुवानच्वाग के भारत सम्बन्धी विवरणो से पता चलता है कि अशोक अपनी वृद्धावस्था में एक समय बीमार पडा, उसका यह रोग कुछ दिनो तक चलता रहा, और जब उस को विश्वास होने लगा, कि उसका अब अन्तकाल आ पहुचा है, तो उसने अपनी सब सम्पत्ति बौद्ध सघ को देनी चाही। परन्तु उस के एक मुख्य मन्त्री ने, जो उस समय शासन का सचालन कर रहा था, अशोक को ऐसा करने से रोक दिया। इस पर अशोक ने

दुखी होकर कुक्कुटाराम * के विहार के भिक्षुओं के पास अपने सामने रखा हुआ फल का आधा टुकड़ा इस संदेशे के साथ भिजवाया :—. "जो एक समय समस्त जम्बुद्वीप का स्वामी था, अब केवल इस आधे फल का स्वामी है। मेरे जीवन के इस अन्तिमकाल में मेरे पास से सब कुछ छीन लिया गया है। मेरी इस तुच्छ भेंट को ही अब आप स्वीकार कीजिये।" †

उत्तर भारत के बौद्ध ग्रन्थों में भी उक्त कथा इस प्रकार मिलती है। अशोक के मन्त्री राधागुप्त ने जब यह देखा कि अपनी वृद्धावस्था में अशोक लापरवाही से बौद्ध संघ को दान देकर राजकोष को खाली किये दे रहा है तो उसने युवराज सम्प्रति (अशोक के पौत्र और कुनाल के पुत्र) से कहा की खजाने के इस प्रकार से खाली होजाने से साम्राज्य की शक्ति क्षीण हो जायगी और शत्रु उस पर हमला कर देंगे। मन्त्री के समझाने पर युवराज ने कोषाध्यक्ष को आज्ञा दी कि सम्राट् की आज्ञा से राजकोष से द्रव्य न दिया जाय। इस पर अशोक ने मन्त्री राधागुप्त को बुलाया और उससे पूछा कि "इस देश का राजा कौन है"? मन्त्री ने जवाब दिया कि "महाराज आप"! अशोक के नेत्रों में पानी भर आया और उसने कहा "मुझे प्रसन्न करने को क्यों झूठ बोलते हो। मैं तो सम्राट् पद से गिर गया हूं। यह आधा फल का

---

* यह पाटलिपुत्र के पास एक बड़ा बौद्ध विहार था।

† Beal's Buddhist Records of the Western world Vol. II

टुकड़ा जो मेरे सामने रखा है इसको छोड़ कर मेरे पास अब और कुछ नहीं रहा जो मैं किसी को दे सकूँ"। फिर अशोक ने कुक्कुटाराम विहार के भिक्षुओं के पास निम्न संदेश के साथ वह आधा फल भिजवाया। "भारत के सम्राट् की अब यह दशा होगई है कि वह आपको केवल यह फल का टुकड़ा दे सकता है। मेरा स्वास्थ्य बिगड़ गया है, मेरा साम्राज्य और मेरा सारा माल-खजाना मुझ से छिन गया है। मेरे इस अन्तिम काल में संघ को छोड़ कर मेरा और कोई सहारा नहीं। मेरी ओर से आधे फल का यह अन्तिम दान स्वीकार कीजिये"। यह कहते कहते अशोक परमगति को प्राप्त होगये।

अन्तिम समय की अशोक की इस धार्मिक अनुरक्ति ने चन्द्रगुप्त और चाणक्य द्वारा स्थापित शक्तिशाली साम्राज्य के दृढ़ सूत्र को ढीला कर दिया। अशोक ने उस विशाल और शक्तिशाली साम्राज्य के साधनों को संसार में बुद्ध भगवान् की धार्मिक शिक्षा के प्रसार में लगाया। परन्तु वह साम्राज्य ससार को प्रकाशित करने में स्वयं नष्ट होगया। अशोक के पश्चात् ही मौर्य्य साम्राज्य छोटे छोटे टुकडो में विभक्त होगया। भारत ने संसार का उपकार तो अवश्य किया परन्तु अभाग्यवश अपने को राजनैतिक क्षेत्र में शक्तिहीन बना लिया। अशोक के बाद एक शताब्दि के अन्दर ही देश बाहर के छोटे छोटे आक्रमणकारियों का भी सामना न कर सका।

अध्याय १०

संसार के इतिहास में अशोक का स्थान

मानव इतिहास में किसी भी महापुरुष का क्या स्थान है। यह तीन बातों से निश्चित् किया जा सकता है।

(१) उसके जीवन के उद्देश।

(२) उनको कार्य रूप में परिणत करने की सफलता।

(३) संसार पर उसके कार्यों का प्रभाव।

अशोक के सम्बन्ध में उक्त प्रश्नों के उत्तर देने से पूर्व हमे फिर से संक्षिप्त में उस समय की ऐतिहासिक स्थिति का निरूपण करना उपयुक्त होगा। अशोक के पितामह महान् विजेता और शासक सम्राट् चन्द्रगुप्त ने यवन आक्रमणकारियों को भारतवर्ष से भगा कर एक विशाल भारतीय साम्राज्य का निर्माण किया। इस साम्राज्य में दक्षिण और पूर्व के कुछ थोडे से भागों को छोड़-कर समस्त भारतवर्ष सम्मिलित था। इसके अतिरिक्त सारा अफगानिस्तान और मध्य एशिया का भी एक बड़ा भाग इस साम्राज्य के अन्तर्गत था। मध्य एशिया वाले पर्वतीय प्रदेशों के इसके अन्तर्गत होने से इस साम्राज्य की स्वतंत्रता की नींव बहुत

दृढ़ होगई थी। चन्द्रगुप्त और उसके महान् मन्त्री चाणक्य के विज्ञ कौशल से इस विशाल साम्राज्य का पर्याप्तरूप से संगठन भी होगया था। चन्द्रगुप्त के पुत्र बिन्दुसार ने भी इस साम्राज्य की शक्ति को और बढ़ाया। जैसा हम पिछले एक अध्याय में बता आये हैं अशोक ने भी अपने शासन के प्रारम्भिक काल में बड़े उत्साह से साम्राज्य के संगठन-कार्य को किया, और उसके विस्तार बढ़ाने की नीति को जारी रक्खा। इसमें सन्देह नहीं किया जा सकता कि यदि वह कलिंग युद्ध में सफलता प्राप्त करने के पश्चात् भी अपने उसी विजयी जीवन को जारी रखता तो अवश्य ही वह दक्षिण की चोड, पाण्ड्य आदि छोटे छोटे राज्यों पर विजय प्राप्त कर लेता, इतना ही नहीं वरन् वह भरत के सुदूरवर्ती सीरिया, इजिप्ट, मेसेडन और ग्रीस आदि देशों पर भी विजय प्राप्त कर सकता था। इस प्रकार वह भारतीय साम्राज्य को एक विशाल चक्रवर्ती राज्य में परिणत कर देता। एक विशाल राज्य की स्थापना करना उस समय के इतिहास की एक मुख्य धारणा थी। मौर्य्य काल और विशेष कर अशोक का ही एक ऐसा समय था जबकि सुगमता-पूर्वक भारत राजनैतिक क्षेत्र में संसार का प्रभुत्व प्राप्त कर सकता था। अशोक के पास चन्द्रगुप्त की संगठित अजेय सेना थी, चन्द्रगुप्त द्वारा स्थापित एक विशाल और सुसंगठित साम्राज्य की समस्त शक्ति और साधन उसके हाथ में थे, और एक महान् विजेता के समान उस में अनोखी संलग्नता, साहस और उत्साह था। इस प्रकार अशोक के समय भारत में संसार विजय के समस्त साधन इकट्ठे थे। परन्तु भारत के इतिहास

का अशोक ने सहसा रूप ही बदल दिया।

कलिंग की विजय के बाद अशोक ने अपने शस्त्र फेंक दिये, और नये देशों को विजय कर अपने साम्राज्य में मिलाने का कार्य केवल उसने स्वयं ही नहीं त्यागा, प्रत्युत अपने पुत्र और पौत्रों तक को आदेश कर दिया कि वह नये देश विजय करने का प्रयत्न सदा के लिये छोड़ दें। राजनैतिक संसार में एक बिलकुल नये आदर्श को ही अशोक ने अपने सम्मुख रखा। उसने संसार भर में दया और प्रेम का ही साम्राज्य स्थापित करना निश्चय कर लिया। उसका यह दया भाव अपने देश की प्रजा पर ही सीमित न था, वरन् मनुष्यमात्र की वह भलाई चाहने लगा। अशोक के निम्न लिखित विवरण से उसके विशाल हृदय की उदारता स्पष्ट प्रकट होती है, और इससे उसके जीवन के मुख्य आदर्श का भी पता चलता है। "सब मनुष्य मेरे लिये मेरी ही सन्तान के समान हैं। जिस प्रकार मैं अपनी सन्तान के लिये इस लोक और परलोक में उनका भला चाहता हूं, वैसा ही दोनों लोकों में मैं मनुष्यमात्र के लिये भलाई चाहता हूं"।

उसकी दया दृष्टि मनुष्यों तथा पशु-पक्षियों पर समान थी प्राणीमात्र की भलाई, सुख और शान्ति अशोक के जीवन का मुख्य उद्देश होगया और मानव जाति की नैतिक उन्नति को अशोक ने अपना मुख्य कर्तव्य बनाया। जैसा हम पीछे बता आये हैं, अशोक की धार्मिक शिक्षा में शिष्टता सौजन्य और सेवा-भाव कूट-कूट कर भरे थे। उसने सर्वोत्कृष्ट नैतिक सत्य को संसार के सामने रखा, जैसा कि उसने लोगों को बताया कि कठोरता, क्रोध,

निर्दयता, अभिमान और द्वेष पाप का मूल है। उसका कहना था कि कोई मनुष्य कितना भी बड़ा क्यो न हो, परन्तु जब तक उस में संयम, विचार सम्बन्धी पवित्रता, कृतज्ञता, दृढ भक्ति आदि गुण नही, तब तक वह नीच है। वह निरन्तर लोगों को इस बात का ध्यान दिलाया करता था कि अच्छे काम करने की प्रवृत्ति सदा ही उनके हृदय मे बलवती रहनी चाहिये।

अब हम यह विचार करते हैं कि अशोक ने इस महान् आदर्श के पूरा करने के लिये क्या क्या प्रयत्न किये, और उसको इनमें कहाँ तक सफलता प्राप्त हुई। अपनी नैतिक शिक्षाओं को जन साधारण में फैलाने के लिये अशोक ने अपनी आमोद प्रमोद मयी यात्राओं को नैतिक यात्राओं में परिणत कर दिया, महामात्रो को दौरा करते समय इन नैतिक शिक्षाओं के प्रचार करने का उसने आदेश किया, और बाद में उसने धर्ममहामात्रों की नियुक्ति भी इसी विशेष काम के लिये की। अपने दूतों द्वारा उसने इनका दूर-दूर के देशों मे प्रचार कराया, इन शिक्षाओं को स्थायी बनाने के लिये उसने उनको चट्टानों और स्तम्भो पर खुदवाया। अपनी इन नैतिक शिक्षाओं को फैलाने मे अशोक ने बल से काम नहीं लिया, वरन् प्रेम पूर्वक समझा कर ही उसने मानव हृदय पर यह नवीन विजय प्राप्त की।

अशोक संसार में अपने समय का सबसे शक्तिशाली साम्राट् था। जैसा कि हमको प्राचीन योरोपीय इतिहासकारो के लेखों से मालूम होता है कि मौर्य्य साम्राटो का दूर-दूर के देशो तक में मान था। इस से अनुमान किया जा सकता है कि उस समय

के सभ्य संसार में अशोक के शब्दो का कितना मूल्य होगा। अपने जीवन काल ही मे अशोक ने इस नवीन नैतिक विजय को कहां तक प्राप्त किया, इसका उसके शिलालेखों से पता चलता है, जिनसे मालूम होता है कि यह नैतिक विजय उसको बार बार अपने देश की समस्त जनता तथा दूर-दूर के देशों मे, जिनमें सीरिया, इजिप्ट, ग्रीस आदि भी शामिल थे, प्राप्त हुई। और जिन देशों मे उसके दूत भी न पहुंच सके वहा भी उसकी नैतिक शिक्षाओं की प्रसिद्धि सुन-सुन कर लोग उनका अनुसरण करते थे।

अशोक के इस महान् प्रयत्न का उसके परवर्ती संसार के इतिहास पर क्या असर पडा इसका पता अशोक के बौद्ध धर्म के प्रचार सम्बन्धी सफल परिश्रम से लगता है। अशोक के पहिले अन्य भारतीय धार्मिक सम्प्रदायों के समान बौद्ध धर्म भी एक छोटी सी धार्मिक संस्था थी, जिसके अनुयायी थोडे बहुत केवल पूर्वी भारतवर्ष मे ही थे, और इनमें भी आपस में बहुत से मतभेद उठ खड़े हुए थे, जिससे बुद्ध भगवान् का स्थापित किया हुआ संघ कितने ही मत मतान्तरों मे विभाजित हो गया था। अपने, स्वतः नैतिक विचारो से इतना मिलता-जुलता होने पर अशोक ने जब इस धर्म को ग्रहण किया तो उसने कठिन परिश्रम के बाद यह निश्चय किया कि बुद्ध भगवान् का बताया हुआ सत्य धर्म क्या था। तत्पश्चात् इसके आधार पर संघ मे एकता स्थापित कर समस्त संसार में इस नवीन धर्म को फैलाने का उसने पूरा प्रयत्न किया। इस शुभ कार्य के लिये उसने अपने प्रिय पुत्र और पुत्री

को भी अर्पण कर दिया। अशोक के ही परिश्रम के फल स्वरूप, बौद्ध धर्म एक उज्ज्वल विश्वधर्म बन गया। यह धर्म केवल समस्त भारतवर्ष में ही नहीं, प्रत्युत समस्त मध्य एशिया, चीन, तिब्बत, जापान, श्याम, बर्मा, सीलोन आदि सुदूर देशों में भी फैल गया था। अपनी जन्मभूमि भारतवर्ष को छोड़ कर उक्त अन्य देशों में, आज तक अधिकांश जनता बौद्ध धर्म की ही अनुयायी है। भारत में भी बंगाल और कुछ अन्य स्थानों में थोड़े बहुत बौद्ध धर्म के मानने वाले अब भी मिलते हैं, और इस देश से भी कहने मात्र को बौद्ध धर्म उठ गया है। इस देश में सदा से ही बुद्ध भगवान् को उच्च सम्मान दिया गया है। हिन्दू धर्म में उनको परमेश्वर का एक अवतार तक माना गया है, और भारत की सभ्यता और जन साधारण के जीवन पर बुद्ध भगवान् की शिक्षाओं का अमिट प्रभाव पड़ा है।

पश्चिम की ओर सीरिया और उसके आस पास के देशों में अशोक के समय में जो बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ, उस के फलस्वरूप ही दो शताब्दियो के बाद वहाँ ईसाई धर्म की उत्पत्ति हुई, विद्वानों ने ठीक ही अनुमान किया है कि ईसाई धर्म पर बौद्ध धर्म की पूरी छाप लगी है। इस में सन्देह नहीं कि ईसाई धर्म में दया, प्रेम और सेवा भाव बुद्ध भगवान् की शिक्षाओं का ही एक स्वरूप हैं। ईसाई धर्म ने बौद्ध धर्म से केवल उसकी नैतिक शिक्षाओं को ही नहीं ग्रहण किया, वरन उसके संघ व्यवस्था, सामूहिक उपासना तथा पापों की स्वीकृति आदि प्रथाओं को भी उसी से लिया है। ईसाइयों में मंक और नन बनने की प्रथा बौद्ध

भिक्षु और भिक्षुणी संस्था का ही रूपान्तर है। बौद्ध चैत्यों के आधार पर ही प्राचीन ईसाई गिर्जे बनाये जाते थे, और बौद्धों की जातक कथाओं के आधार पर इन गिर्जों में प्रवचन दिये जाते थे। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो बौद्ध धर्म से ही ईसाई धर्म की उत्पत्ति हुई, और यह धर्म बौद्ध धर्म की ही एक शाखा है। इस प्रकार किसी न किसी रूप से समस्त सभ्य संसार पर अशोक द्वारा प्रचालित नैतिक और धार्मिक शिक्षाओं का अमिट प्रभाव पड़ा है जो किसी न किसी रूप में आज तक मौजूद है।

यदि हम समस्त मानव इतिहास पर दृष्टिपात करते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि संसार के इतिहास में अशोक का एक बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। कतिपय विद्वानों ने अशोक की तुलना संसार के इतिहास के बडे बड़े सम्राटों से की है। कुछ उसको एलेक्ज़ेंडर सीजर और नेपोलियन की श्रेणी में रखते हैं। परन्तु अशोक की इनसे तुलना करना भूल है। इनमें से किसी ने भी समस्त मानव समाज के दुख-सुख के बारे में न कुछ सोचा ही, और न कुछ किया ही, और न वे कभी मनुष्यमात्र की नैतिक उन्नति के मधुर स्वप्न से प्रेरित ही हुए। संसार के महान् सम्राटों में केवल अशोक ने ही उदारता पूर्वक समस्त मानव समाज को एक मान कर उस की नैतिक उन्नति का भरसक प्रयत्न किया। कभी उसकी तुलना कान्सटेनटाइन और चारलेमेन से की जाती है। परन्तु इनमें से कोई भी अशोक के समान उदार हृदय नहीं था और न कभी अशोक के समान उनके जीवन का मुख्य ध्येय विश्व-व्यापी प्रेम, शांति और भ्रातृत्व को संसार भर में फैलाना ही रहा। संसार के सामाजिक,

धार्मिक और नैतिक व्यवहारों पर जितना असर अशोक के कार्यों का पड़ा उतना किसी सम्राट् का नहीं पड़ा। वास्तव में संसार के सामाजिक और धार्मिक इतिहास में अशोक का प्रमुख स्थान है। एच० जी० वेल्स ने ठीक ही लिखा है, "इतिहास के पृष्ठों में भरे हुए लाखों सम्राटों के नामों में, केवल अशोक का ही नाम उज्ज्वल तारे के समान अकेला और सब से ऊपर चमकता है। योरोप की वोलगा नदी से लेकर जापान तक उसके नाम का अब तक आदर होता है। चीन, तिब्बत और भारत में भी (यदि भारत ने उसके सिद्धान्तों को अब छोड़ दिया है) अब तक उसकी महानता की अधिकांश जनता के, जिसने कान्स्टेन्टाइन और चारलेमन का नाम तक भी नहीं सुना, हृदय में आज भी अशोक की स्मृति वर्तमान है"। निःसन्देह समस्त मानव समाज से क्रूरता दूर कर उसको सभ्य बनाने का अशोक ने ही प्रथमबार महान् और सफल उद्योग किया था।

जापान, चीन, तिब्बत, बर्मा, सीलोन आदि देशों में तो आज तक भी अशोक के नाम का आदर होता है। भारत में भी बौद्ध परम्परा के समान ही ब्राह्मणीय ऐतिहासिक परम्परा में भी अशोक को सदा 'धर्माशोक' कहकर उसका यथोचित सम्मान किया गया है। कन्नौज के राजा गोविन्दचन्द्र की रानी कुमारदेवी ने अपने बारहवीं शताब्दी के सारनाथ के स्तम्भ पर खुदवाये हुए लेख में अशोक को "धर्माशोक नराधिपस्य" इत्यादि शब्दों से अभिहित किया है। उसके थोड़े समय पश्चात् के अन्य खुदे हुए लेख में भी उसे "धर्माशोक" कहा है। काश्मीर-कवि और इतिहासकार कल्हण ने भी अशोक को ठीक ही एक ऐसा सत्यसंध

और धर्मात्मा सम्राट् कहकर पुकारा है जिसने कि संसार से पाप को दूर कर दिया था। जिस प्रकार गोकुल अष्टमी श्रीकृष्ण के और रामनौमी श्री राम के जन्म दिन की यादगार है, सम्भवतः इसी प्रकार पौराणिक परम्परा की अशोकपूर्णिमा महान् सम्राट् अशोक की यादगार हो। सैकड़ों शताब्दियों को पार करते हुए चट्टानों और स्तम्भों पर खुदवाये हुए उसके धर्म लेख आज भी हमको उसके महान् आदर्श और महान् पराक्रम का परिचय दे रहे हैं। इन लेखों के पढ़ने से मालूम होता है कि आज भी अशोक प्राणीमात्र पर दया और प्रेम की दृष्टि से देख रहा है।

भाग २
अशोक के खुदवाये हुए लेख

अध्याय ११

अशोक के खुदवाये हुये लेख अब तक कहां कहां मिले हैं।

पेशावर से लेकर मैसूर तक, और काठियावाड से लेकर उड़ीसा तक भिन्न-भिन्न स्थानों पर अशोक के खुदवाये हुये कितने ही लेख प्राप्त हुये हैं। अब तक जो उसके लेख मिले हैं उन को बहुधा पांच भागों में विभाजित किया जासकता है। (क) प्रधान शिलालेख। (ख) प्रधान स्तम्भलेख। (ग) गौण शिलालेख (घ) गौण स्तम्भ लेख। (ङ) गुफालेख।

(क) प्रधान शिलालेख

प्रधान शिलालेखों में चौदह प्रज्ञापन हैं जो निम्नलिखित स्थानो पर मिले हैं।

(१) यह चौदह प्रज्ञापन पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त के पेशावर जिले की यूसुफजाई तहसील में मरदान से नौ मील शाहबाज-गढी और कपूरदागढ़ी ग्रामों के बीच मकाम नदी के किनारे पर पास-पास दो चट्टानों पर खुदे मिले हैं।

(२) यह चौदह प्रज्ञापन पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त के हजारा जिले में अबटाबाद से पन्द्रह मील मानसेरा नाम के तहसील-

से उठवाकर इस स्थान पर खड़ा करवाया था।

(३) इलाहाबाद स्तम्भः— यह स्तम्भ इलाहाबाद मे गङ्गा और यमुना के सगम पर अकबर के बनवाये हुए क़िले के अन्दर खडा है। अशोक के लेख के अतिरिक्त इस पर सम्राट् समुद्रगुप्त का भी एक लेख है। इस पर बीरबल का भी एक छोटा सा लेख है। बाद मे मुगल सम्राट् जहागीर ने भी इस पर अपना एक लेख खुदवाया है।

(४) लौरिया-अरिराज स्तम्भः— बिहार प्रात के चम्पारन जिले के लौरिया नाम के ग्राम के पास रधिया से ढाई मील पर अरिराज महादेव के मन्दिर से कुछ दूर पर यह स्तम्भ खडा है।

(५) लौरिया-नन्दनगढ स्तम्भ.—बिहार प्रात के चम्पारन जिले के उक्त स्थान लौरिया से कुछ दूर नन्दनगढ नाम के पुराने क़िले के पास यह स्तम्भ खडा है।

(६) रामपुरवा स्तम्भः—बिहार प्रात के चम्पारन जिल में बेतिया से ३२½ मील उत्तर की ओर रामपुर्वा ग्राम में यह स्तम्भ खडा है।

इनमें देहली-तोपरा स्तम्भ पर अशोक के सात प्रज्ञापन हैं। बाक़ी पाच स्तम्भों पर उसके छै प्रज्ञापन हैं।

(ग) गौण शिलालेख

इसम एक प्रज्ञापन निम्न स्थानों में चट्टानों पर खुदा मिला है।

(१) मध्यप्रांत में जबलपुर और कटनी के बीच सलीमनाबाद रेलवे स्टेशन से चौदह मील कैमूर पर्वत माला की तलैटी में रूपनाथ नाम के तीर्थस्थान में एक चट्टान पर यह लेख खुदा है। इस चट्टान के पास तीन छोटे छोटे चश्मे बहते हैं जिनका नाम राम लक्ष्मण और सीता है।

(२) बिहार के शाहाबाद जिले की सहसराम तहसीलस्थान से दो मील पूर्व की ओर कैमूर पर्वतमाला की चन्दनपीर नामक पहाड़ी में एक गुफा के अन्दर चट्टान पर यह लेख खुदा है।

(३) राजपूताना के जयपुर राज्य में बैराट् तहसील-स्थान से एक मील उत्तर-पूर्व की ओर एक चट्टान पर यह लेख उत्कीर्ण है।

(४) निजाम राज्य के रायचूर जिले के लिंगसुगूर ताल्लुके में मस्की नाम के ग्राम में एक चट्टान पर यह लेख खुदा है। अशोक के खुदवाये समस्त लेखों मे मस्की का ही केवल एक ऐसा लेख है जहां देवानांप्रिय के साथ साथ अशोक ने अपना नाम भी खुदवाया, जिससे यह बिलकुल निर्विवाद होगया कि यह सब लेख अशोक के ही खुदवाये हैं।

(५) मस्की से ४४ मील निजाम राज्य में कोपबद् नगर में गवीमठ और पालकीगुण्डु नाम के पहाड़ी स्थानों में भी पास-पास दो चट्टानों पर यह लेख थोड़े दिन हुए मिला है। गवीमठ में तो यह अच्छी तरह सुरक्षित है, पर पालकीगुण्डु में इसके कुछ कुछ भाग ही मिले हैं।

(६) मैसूर के चितलदुर्ग जिले में ब्रह्मगिरि नाम के पर्वत

स्थान पर पास-पास तीन चट्टानों पर भी खुदे मिले हैं।

(३) यह चौदह प्रज्ञापन संयुक्त प्रान्त के देहरादून जिले की चकरोता तहसील में जमना और टॉस के सगम के समीप कालसी नाम के ग्राम में एक चट्टान पर खुदे मिले हैं।

(४) यह चौदह प्रज्ञापन काठियावाड में जूनागढ से पूर्व की ओर एक मील गिरनार पर्वत के रास्ते में एक चट्टान पर खुदे हैं। इसी चट्टान पर महाक्षत्रप रुद्रदमन और बाद में महाराज स्कदगुप्त का भी एक लेख खुदा है। जैसा कि रुद्रदमन के लेख से पता चलता है कि यह चट्टान चन्द्रगुप्त मौर्य्य द्वारा बनवाई गयी सुदर्शन झील के पास थी। रुद्रदमन के लेख से यह भी पता चलता है कि अशोक ने पुन: इस झील को ठीक करवाया और उस से नहरें आदि निकलवाईं।

(५) इन प्रज्ञापनों की एक अन्य प्रतिलिपि उडीसा के पुरी जिले की खुर्दा तहसील में भुवनेश्वर से सात मील दक्षिण की ओर धौली नाम के ग्राम में दयाह नदी के किनारे अश्वत्थामा नाम की एक चट्टान पर खुदी है। यहा पर केवल उक्त ग्यारह प्रज्ञापन हैं, बारह और तेरह नहीं हैं। परन्तु उनके स्थान पर दो नये ही प्रज्ञापन हैं। इन तेरह प्रज्ञापनों के ऊपर चट्टान से ही काट कर हाथी के मस्तक व सूँड की चार फीट ऊची एक बडी सुन्दर मूर्ति बनी है।

(६) धौली के समान तेरह प्रज्ञापनों की एक अन्य प्रतिलिपि उड़ीसा प्रान्त के गजम जिले के बैरामपुर ताल्लुके में गजम नगर से १८ मील पश्चिमोत्तर की ओर जौगड के पुराने क़िले में

एक चट्टान पर खुदी है।

(७) मद्रास प्रान्त के कुरनूल जिले में निर्रागुड़ी नाम के स्थान पर भी हाल में इन चौदहों प्रज्ञापनों की एक प्रतिलिपि प्राप्त हुई है। इसका अभी तक ठीक ठीक प्रकाशन नहीं हुआ है।

(८) बम्बई प्रान्त के थाना जिले के बेसीन ताल्लुके में सोपारा (प्राचीन शूर्पारक) नाम के नगर में केवल आठवें प्रज्ञापन का कुछ अंश एक चट्टान के टूटे टुकड़े पर लिखा मिला है, जिस से मालूम होता है कि अशोक के समस्त उक्त चौदह प्रज्ञापन यहां पर भी खुदे थे। यह पत्थर का टुकड़ा बम्बई के अजायबघर में रखा है।

शहबाजगढ़ी और मानसेरा की प्रतिलिपियां खरोष्ठी लिपि में खुदी हैं, जो दाहिनी ओर से बाईं ओर लिखी जाती थी, बाकी सब प्रतिलिपियां ब्राह्मीलिपि में हैं।

(ख) प्रधान स्तम्भ लेख

अशोक के यह लेख भिन्न-भिन्न निम्न लिखित स्थानों में प्राप्त स्तम्भों पर खुदे हैं।

(१) **देहली-तोपरा स्तम्भः**—देहली के समीप फीरोजाबाद के प्राचीन भग्नावशेषों के बीच यह स्तम्भ खड़ा है, सन् १३५६ ई० में सुलतान फीरोजशाह तुगलक ने अम्बाला जिले के तोपरा नामक स्थान से इस स्तम्भ को उठवाकर यहां खड़ा किया था।

(२) **देहली-मेरठ स्तम्भः**—यह स्तम्भ देहली के समीप एक छोटी पहाड़ी पर खड़ा है। इसको भी फीरोजशाह ने मेरठ

की एक चट्टान पर यह लेख खुदा है।

(७) ब्रह्मगिरि से एक मील पश्चिम की ओर सिद्धपुर के पास एक चट्टान पर यह लेख खुदा है।

(८) ब्रह्मगिरि से तीन मील उत्तर पश्चिम की ओर जतिङ्ग रामेश्वर नाम की पहाडी की एक चट्टान पर यह लेख खुदा है।

यह मैसूर के तीन लेख अन्य गौण शिला लेखों से बड़े हैं, और इनमें अशोक के दो प्रज्ञापन हैं।

(९) मद्रास प्रांत के कुरनूल जिले के विर्रागुडी नाम के स्थान के पास प्रधान शिललेख के चौदहों प्रज्ञापनो के पास एक चट्टान पर भी यह लेख खुदा है। यहा पर यह गौण शिलालेख का प्रज्ञापन बडी असावधानी से लिखा गया है, और इसका पढना बहुत कठिन होगया है।

(१०) उक्त नौ गौणशिला लेखों के अतिरिक्त राजपूताना के जयपुर राज में बैराट ही के पास अशोक का बौद्ध धर्म सम्बधी ग्रन्थों का एक अन्य ही प्रज्ञापन पत्थर पर लिखा मिला है, जो *यहा से लाकर कलकत्ता के अजायबघर में रखा गया है।* यह प्रज्ञापन कलकत्ता-बैराट नाम से पुकारा जाता है। क्यो कि यह भाब्रू नाम के स्थान से कुछ दूर मिला था इस कारण कुछ *विद्वानो ने इसको भाब्रू प्रज्ञापन के नाम से भी पुकारा है।*

(घ) गौण स्तम्भ लेख

अशोक के यह लेख निम्न लिखित स्थानों में प्राप्त स्तम्भो पर खुदे हैं।

(१) सांची स्तम्भः—भूपाल राज्य के प्राचीन सांची नाम के स्थान में अशोक के ही बनवाये हुए स्तूप से कुछ दूर यह स्तंभ खड़ा है।

(२) सारनाथ स्तम्भः—बनारस से ३॥ मील उत्तर की ओर अशोक के ही बनवाये स्तूप के पास यह स्तम्भ खड़ा है। सारनाथ में ही बुद्ध भगवान् ने प्रथमवार धर्म शिक्षा दी थी।

(३) इलाहाबाद स्तम्भः—इलाहाबाद स्तम्भ पर भी छै प्रधान स्तम्भ लेखों के बाद सांची और सारनाथ वाले स्तम्भों के लेख के समान एक लेख खुदा है।

इन उक्त तीन गौण स्तम्भ लेखों में अशोक का बौद्ध संघ सम्बन्धी एक प्रज्ञापन है।

(४) रुम्मिनीदेई स्तम्भः—नैपाल राज्य की तराई में भगवानपुर तहसील से दो मील, और अंग्रेजी राज्य के बस्ती जिले के दुल्हा नाम के स्थान से ६ मील यह स्तम्भ रुम्मिनीदेई (लुम्बनी-वन्) तीर्थ स्थान पर खड़ा है। यह बुद्ध भगवान् का जन्म स्थान था। इस स्तम्भ पर अशोक ने इस पुण्य स्थान की अपनी यात्रा का जिक्र किया है। इस लेख की एक और प्रतिलिपि उड़ीसा प्रान्त में भुवनेश्वर के पास कपिलेश्वर ग्राम में एक पत्थर पर खुदी मिली है, जो अब पुरी के अजायबघर में रखी है।

(५) निगलिया स्तम्भः—रुम्मिनीदेई से १३ मील उत्तर पश्चिम की ओर नैपाल की तराई के निगलिया नाम के ग्राम में निगलिया सागर नाम के तालाब के किनारे यह स्तम्भ खड़ा है।

इस स्तम्भ पर भी अशोक ने वहा एक वौद्ध तीर्थ स्थान की अपनी यात्रा का जिक्र किया है।

(ग) गुफा लेख

बिहार प्रान्त में गया से १५ मील बराबर पहाड़ी (जिसका पुराना नाम खलटिका था) की गुफाओं में उत्कीर्ण, अशोक के तीन लेख मिले हैं। इनके पास की अन्य कुछ गुफाओं में अशोक के पौत्र दशरथ के भी कुछ लेख खुदे मिले हैं। यह सब लेख आजीविकों को इन गुफाओं का दान देने से सम्बन्ध रखते हैं।

अध्याय १२

अशोक के लेखों का सरल अनुवाद

(क) प्रधान शिला लेखः—(गिरनार, शाहबाजगढ़ी, मानसेरा, कालसी, धौली, जौगड़)

प्रज्ञापन १

यह धर्मलेख देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी * राजा ने लिखवाया। यहां (इस राज्य में) कोई जीव मारकर बलिदान न किया

---

* 'देवानांप्रिय प्रियदर्शी' शब्दों से ही अशोक ने अपने समस्त लेखों में अपने आपको अभिहित कियाहै, यह उस समय की राजोचित उपाधि थी। पाली के बौद्ध ग्रंथों में भी अशोक को पियदसी (प्रियदर्शी) कहा है। इन में ग्रन्थों अशोक के पितामह चन्द्रगुप्त को भी इस उपाधि से अभिहित किया गया है, और मुद्राराक्षस नाटक में भी एक स्थान पर चन्द्रगुप्त को प्रियदर्शी कहकर पुकारा है। मस्की के लेख में देवानांप्रिय के साथ अशोक ने अपना नाम भी दिया है। अशोक के समकालीन सिंहल नरेश तिष्य के लिये भी पाली ग्रंथों में देवानांप्रिय की उपाधि का प्रयोग किया गया है। अशोक के पौत्र दशरथ ने भी अपने खुदवाये हुये लेखों में अपने को इस उपाधि से भूषित किया है।

जाय, और न कोई ऐसा समाज (उत्सव) किया जाय जिसमें जीव बलिदान किये जाते हैं)।* जिन समाजों में ऐसा नहीं होता वे देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा को भी अच्छे लगते हैं। पहिले देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा के ही रसोई-घर के लिये प्रतिदिन हजारों जीव मारे जाते थे,† पर जिस समय यह लेख लिख

कात्यायन, पातंजलि आदि प्राचीन संस्कृत वैयाकरणों ने देवानांप्रिय शब्द का अच्छा भाव बताया है, परन्तु बौद्ध धर्म से वैमनस्य के कारण अशोक की निन्दा करने के लिये बाद के कुछ वैयाकरणों ने देवानांप्रिय का अर्थ खेंचतान कर मूर्ख लगाना चाहा है।

* प्राचीन समय में, जैसे अब भी कहीं कहीं, उत्सवों में जहां हजारों की संख्या में मनुष्य जमा होते थे, पशु बलिदान किये जाते थे। मालूम होता है कि उक्त प्रज्ञापन में अशोक ने ऐसे उत्सवों का जहां पशु बलिदान किये जाते थे निषेध किया है।

† शाही रसोई घर के लिये इतने जीवों का रोज़ मारा जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। बौद्ध ग्रन्थों से पता चलता है कि अपने शासन के आरम्भिक काल में अपने पिता बिन्दुसार के समान अशोक प्रतिदिन ६००,००० ब्राह्मणों को भोजन दिया करता था। महाभारत में रन्तिदेव राजा के बारे में लिखा है कि वह अपने रसोईघर में पकवाकर प्रतिदिन २००० पशुओं का मांस लोगों को बांटा करता था, और अतिथियों के आने पर २१,००० पशु तक मारे जाते थे।

बाया गया केवल तीन जीव, दो मोर और एक हरिन, मारे जाते हैं, इनमें भी हरिन रोज नहीं मारा जाता। यह तीन जीव भी भविष्य में नहीं मारे जायँगे।

प्रज्ञापन २

देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी के राज्य में सब स्थानों पर तथा जो पड़ौसी राज्य हैं, जैसे चोड़, पाण्ड्य, सत्यपुत्र, केरलपुत्र,* ताम्रपर्णी (सीलोन) और सीरीया के यवन राजा अन्तियोक† और उसके अन्य पड़ौसी राजाओं के देशों में भी देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा ने मनुष्यों की और पशुओं की चिकित्सा का प्रबन्ध किया है। मनुष्यों और पशुओं की उपयोगी औषधियाँ जहाँ जहाँ नहीं है वहाँ वहाँ वे लाकर लगवाई गई। इसी प्रकार जहाँ जहाँ फल और मूल नहीं होते थे, वहाँ पर वे भी लाकर लगवाये गये। मार्गों में मनुष्यों और पशुओं के उपभोग के लिये कुएँ खुदवाये गये और वृक्षादि लगवाये गये।

प्रज्ञापन ३

देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा ऐसा कहता है कि अपने

---

* यह सब मौर्य साम्राज्य के बाहर दक्षिण भारत की छोटी-छोटी रियासतें थीं। इनमें से सत्यपुत्र किन लोगों या किस स्थान का नाम था इसका अभी तक ठीक ठीक निर्णय नहीं हुआ है।

† अान्तियोक से यहां ऐन्टिओकस द्वितीय, सेल्यूकस निकेटर के पोते से, अभिप्राय है। उसके पड़ौसी राजाओं के तथा उनके देशों के नामों का उल्लेख आगे चल कर तेरहवें प्रज्ञापन में आता है।

अभिषेक के बारहवें वर्ष बाद मैंने यह आज्ञा दी कि मेरे राज्य में सब जगह युक्त, रज्जुक और प्रादेशिक* प्रति पाँचवें वर्ष शासन सम्बन्धी दूसरे कार्यों के साथ साथ लोगों को यह धर्मानुशासन बताने के लिये भी दौरा करें, "माता पिता की सेवा करना, तथा मित्र, परिचित, सम्बन्धियों, ब्राह्मणों और श्रमणों की सहायता करना अच्छा है, जीवों का न मारना अच्छा है, थोड़ा व्यय करना और थोड़ा सञ्चय करना ही ठीक है"। मन्त्री परिषद भी युक्तों को आज्ञा दें कि वह इसका हिसाब रखें कि यह दौरे किन उद्देशों से और कहा और किस प्रकार किये गये।

प्रज्ञापन ४

बहुत काल बीत गया सैकड़ों वर्षों से प्राणियों का वध, जीवों की हिंसा, सम्बन्धियों ब्राह्मणों तथा श्रमणों का अनादर बढ़ताही गया। परन्तु अब देवताओं के प्रिय प्रियदर्शीराजा के धर्माचरण के भेरीनाद द्वारा धर्म की घोषणा होती है, और लोगों के विमानों, हाथियो अग्निस्कधा और दूसरे दिव्यरूपा † के दर्शन

---

* यह क्रम से उस समय के शासन अधिकारियों के नाम हैं। युक्त छोटे राज्य अधिकारी होते थे रज्जुक जिलाधीश और प्रादेशिक कमिश्नर के समान होते थे।

† इन से धार्मिक जलसों का तात्पर्य है, जिन में विमान और हाथी आदि पर बैठे हुए देवताओं की प्रतिमायें निकाली जाती होंगी। ऐसा प्रतीत होता है कि लोगों में धार्मिक अनुरक्ति जाग्रत करने के लिये अशोक ने इनका प्रचार कराया। सम्भव है आजकल की भिन्न भिन्न रथयात्रायें प्राचीन समय के इन जलसों का ही रूपान्तर हों।

कराये जाते हैं। जैसा सैकड़ो वर्षों के अन्दर पहले कभी नहीं हुआ। आजकल देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा के धर्मानुशासन से प्राणियों की अहिंसा, जीवों की रक्षा, सम्बन्धियों, ब्राह्मणों तथा श्रमणों का आदर, माता-पिता और वृद्ध जनों की सेवा, यह सब तथा अन्य धर्माचरण कितने ही प्रकार से बढ़े हैं। देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा इस धर्माचरण को और भी बढ़ायेगा। और उसके पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र भी इस धर्माचरण को कल्पान्त तक बढ़ावेंगे और धर्म तथा शील का आचरण करते हुए धर्म के अनुशासन का प्रचार करेंगे, क्योंकि धर्मानुशासन ही श्रेष्ठ काम है, और बिना शीलवाले के लिये धर्माचरण बहुत कठिन है। इस धर्मानुशासन की घटती न होना वरन् सदा बढ़ती ही होना श्रेष्ठ है। इसी प्रयोजन से यह लेख लिखवाया गया है कि लोग इस उद्देश्य की वृद्धि में लगें और उसकी घटती न होने दें। अपने अभिषेक के बारहवें वर्ष देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा ने यह प्रज्ञापन लिखवाया।

प्रज्ञापन ५

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा यह कहता है कि भलाई का काम करना कठिन है और जो प्रथमबार कोई भी ऐसा काम करता है वह एक कठिन काम को पूरा करता है। परन्तु मैंने बहुत से भलाई के काम किये हैं। इस लिये यदि मेरे पुत्र, पौत्र तथा उनकी भी सन्तानें कल्पान्त तक ऐसा करेंगी तो यह एक महान् पुण्य होगा परन्तु जो इनका थोड़ा भी त्याग करेंगे वे पाप के भागी होंगे, पाप करना सरल है। प्राचीन समय से धर्म महा-

मात्र कभी नियुक्त नहीं हुए थे। पर मैंने अभिषिक्त होने के तेरहवें वर्ष बाद धर्म महामात्र नियुक्त किये हैं। ये सब धार्मिक सम्प्रदायों के लिये नियुक्त किये गये हैं। वे धर्म की रक्षा और उसकी वृद्धि तथा धार्मिक लोगों के हित और सुख के लिये नियुक्त किये गये हैं। ये यवनों, कबोजों, गांधारों, राष्ट्रिकों, पैठनिकों तथा पश्चिम की ओर रहनेवाले अन्य लोगों के हित के लिये भी नियुक्त किये गये हैं। वे स्वामी और सेवकों, ब्राह्मणों और धनवानों, अनाथों और वृद्धों के हित और सुख के लिये नियुक्त किये गये हैं। धर्म-परायण लोगों की रक्षा का काम भी उनके हाथ में है। वे अन्याय-पूर्ण प्राण दण्ड और क़ैद को रोकने के लिये, और प्रजा की बाधाओं को दूर करने के लिये नियुक्त किये गये हैं। बड़े परिवार वाले क़ैदियों या विपत्ति से सताये हुए या बहुत बूढ़े लोगों को क़ैद से छुड़ाने और उनकी सहायता और उनकी रक्षा करने का काम भी वे करते हैं। ये लोग यहाँ पाटलिपुत्र में तथा बाहर के सब नगरों में, मेरे तथा मेरे भाईयों, बहिनों और अन्य सम्बन्धियों के महलों में सब जगह नियुक्त हैं। यह धर्म महामात्र मेरे सारे साम्राज्य में धर्मयुक्त लोगों को, जो धर्म का आश्रय लेना चाहते हैं, या जो धर्म में अधिष्ठित हैं, या जो दान आदि देना चाहते हैं, सहायता देने के लिये नियुक्त हैं। इस लिये यह धर्मलिपि लिखवाई गई है कि वह चिरस्थायी रहे तथा मेरी सतति सदा इसका अनुसरण करे।

प्रज्ञापन ६

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा यह कहता है, कि

प्राचीन समय से कभी ऐसा पहिले नहीं हुआ कि किसी भी समय (दिन हो या रात) राजकीय समाचार तथा अन्य राजकार्य सम्बन्धी बातें (राजा के सामने) पेश कीजाती हों। परन्तु मैंने यह प्रबन्ध किया है कि प्रत्येक समय चाहे मैं भोजन करता होऊं, चाहे खास महल में होऊं, चाहे अन्तःपुर में, चाहे पशुशाला में, चाहे देवघर में, चाहे बग़ीचे में, सब जगह प्रतिवेदक (शाही पेशकार) प्रजा के बारे में मुझे सूचना देसकते हैं। सब जगह मैं प्रजा के कार्य करता हूं। यदि किसी बात की मैंने आज्ञा दी हो, उसके विषय में, या जो कार्य महामात्रों के ऊपर छोड़े गये हैं, या उन (महामात्रों की) परिषद् में सन्देह, मतभेद या पुनर्विचार की आवश्यकता हो तो बिना विलम्ब के सब जगह और सब समय मुझे इसकी खबर दीजाय। राजकार्य में मैं कितना ही उद्योग करूं उस से मुझे सन्तोष नहीं होता, सब लोगों की भलाई करना ही मैंने अपना कर्तव्य माना है, और यह उद्योग और राजकार्य संचालन से ही पूरा होसकता है। सर्व लोकहित से बढ़कर और कोई अच्छा काम नहीं है। जो कुछ पराक्रम मैं करता हूं वह इसी लिये है कि प्राणीमात्र का मेरे ऊपर जो ऋण है उससे मैं मुक्त होऊं और उनका इस लोक तथा परलोक में हित बढ़े। यह धर्मलेख इसलिये लिखवाया गया है कि यह चिरस्थायी रहे, और मेरे पुत्र, पौत्र और प्रपौत्र सब लोगों की भलाई के लिये सदा उद्योग करें, अत्यधिक प्रयत्न के बिना यह कार्य कठिन है।

प्रज्ञापन ७

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा चाहता है कि सब जगह

सब सम्प्रदाय के मनुष्य निवास करें, क्यों कि सब ही सम्प्रदाय संयम और आत्म शुद्धि चाहते हैं। परन्तु भिन्न-भिन्न मनुष्य इन बातों को पूरा या थोड़ा पालन करते हैं, क्यों कि भिन्न-भिन्न मनुष्यों की इच्छा और अनुराग भिन्न-भिन्न होते हैं। मनुष्य कितना भी दान करे पर यदि उसमें संयम, आत्म शुद्धि, कृतज्ञता, और दृढ़ भक्ति गुण नहीं तो वह निश्चय ही नीच है।

प्रज्ञापन ८

प्राचीन समय से राजा लोग शिकार तथा अन्य आमोद-प्रमोद और विहार यात्रा के लिये निकलते थे। देवताओं के प्रिय राजा ने अपने राज्याभिषेक के दस वर्ष बाद सम्बोधि (बोधितीर्थ गया) की यात्रा की। इस प्रकार विहार यात्रा के स्थान पर धर्म यात्रा की प्रथा पड़ी। इन धर्म यात्राओं में ब्राह्मणों, श्रमणों और वृ जनों के दर्शन, सोने आदि का दान, जनपद के लोगों से मिलना, उनसे धर्म सम्बन्धी प्रश्न करना, और उनको धर्म उपदेश देना। यह दूसरे प्रकार की यात्राएं (विहार की जगह धर्म यात्राएं) देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा को अधिक आनन्द-दायक हैं।

प्रज्ञापन ९

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा इस प्रकार कहता है, कि विपत्ति-काल में, पुत्र या पुत्री के विवाह, पुत्रजन्म, परदेश जाने, तथा और ऐसे ही दूसरे अवसरों पर मनुष्य अनेक प्रकार के (आडम्बरयुक्त) मङ्गलाचार करते हैं। स्त्रियां तो अनेक प्रकार की ऐसी नीच और निरर्थक क्रियाएं करती हैं। मङ्गलदायक कार्य

अवश्य करने चाहियें। परन्तु उक्त कार्य निरर्थक हैं। असली मङ्गल दायक कार्य तो धर्माचरण है, जिसका फल बहुत अच्छा होता है। इस धर्म-मङ्गल में दास और सेवकों के साथ उचित व्यवहार, गुरुजनों की पूजा, प्राणियों पर दया, ब्राह्मणों और श्रमणों को दान, तथा ऐसे ही अन्य दूसरे धर्म कार्य हैं। इस लिये पिता, पुत्र, भाई, स्वामी, मित्र, परिचित और पड़ोसी को इस धर्म मङ्गल का उपदेश करना चाहिये। यह धर्म मङ्गल अन्य मङ्गल कार्यों से श्रेष्ठ हैं, क्यों कि इस संसार में इन अन्य कार्यों का फल संदिग्ध है, और यदि उनसे कुछ फल भी मिला तो केवल इस संसार ही में। परन्तु धर्म-मङ्गल से सदा के लिये अच्छा फल मिलता है। उससे यहाँ भी अर्थ सिद्ध हो सकता है और यदि न भी हुआ तो परलोक के लिये उनसे अनन्त पुण्य उत्पन्न होता है, उनसे स्वर्ग प्राप्त होता है। दान देना उत्तम है किन्तु कोई दान या अनुग्रह धर्मदान और धर्मानुग्रह से बढ़कर नहीं, जिससे स्वर्ग तक की प्राप्ति सुगम हो जाती है।

प्रज्ञापन १०

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा यश या कीर्ति को लाभ-दायक नहीं समझता। जो कुछ भी यश या कीर्ति को वह चाहता है तो केवल इसी लिये कि उसकी प्रजा वर्तमान और भविष्य में सदा धर्म को सुने और धर्म का पालन करे। देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा जो कुछ पराक्रम करता है वह सब परलोक के लिये करता है, जिससे लोग पाप से बचें। महान् पराक्रम के सिवाय छोटे और बड़े सभी प्रकार के मनुष्यों के लिये पापों से बचना बड़ा

कठिन है। बड़े आदमी के लिये तो यह बहुत ही दुष्कर है।

प्रज्ञापन ११

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है, कि ऐसा कोई दान नहीं है जैसा धर्म का दान, ऐसी कोई मित्रता नहीं जैसी कि धर्म से मित्रता, ऐसा कोई सम्बन्ध नहीं जैसा की धर्म से सम्बन्ध. धर्म यह है कि दास और सेवको से अच्छा व्यवहार किया जाय, माता पिता की सेवा की जाय, मित्र, परिचित, सम्बन्धी, ब्राह्मण और श्रमणों को दान दिया जाय, जीवों को हिंसा न की जाय। पिता, पुत्र, भाई, स्वामी, मित्र, परिचित, सम्बन्धी और पड़ौसी को भी यह कहना चाहिए कि यह पुण्य कार्य हैं इन्हे करना चाहिये। ऐसा करने से मनुष्य को इस लोक में भी सुख मिलता है, और इससे परलोक के लिये भी अनन्त पुण्य प्राप्त होता है।

प्रज्ञापन १२

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा सब धर्मवालों का, त्यागी हो अथवा गृहस्थी, सब का विविध दान और पूजा से सत्कार करता है। किन्तु देवताओं का प्रिय इस दान और पूजा को इतना अच्छा नहीं समझता जितना इस बात को कि सब धार्मिक सम्प्रदायों के सारतत्व की वृद्धि हो। इस सारतत्व की वृद्धि कई प्रकार से होती है, पर उसका मूल वाणी का संयम है अर्थात् लोग केवल अपने ही सम्प्रदाय का आदर और बिना कारण दूसरे सम्प्रदाय की निन्दा न करें। मनुष्य को दूसरे सम्प्रदायों का भी आदर करना चाहिये। ऐसा करने से अपने सम्प्रदाय की उन्नति

और दूसरे सम्प्रदायो का उपकार होता है। इसके विपरीत आचरण से न केवल दूसरे सम्प्रदाय का अपकार ही होता है वरन अपने सम्प्रदाय को भी क्षति पहुचती है। जो कोई अपने सम्प्रदाय के अनुराग के कारण इस विचार से कि उसके सम्प्रदाय का गौरव बढ़े अपने सम्प्रदाय की प्रशंसा करता है और दूसरे सम्प्रदायो की निन्दा करता है वह वास्तव में अपने सम्प्रदाय को हानि पहुंचाता है।

आपस मे मिल-जुल कर रहना, और एक दूसरे के धर्म को आदर से सुनना ही अच्छा है। देवताओ का प्रिय चाहता है कि सब धार्मिक सम्प्रदाय ज्ञान से पूर्ण हो, और उनके सिद्धान्त पवित्र हो। भिन्न-भिन्न धर्म वालो को यह ध्यान रखना चाहिये कि देवताओं का प्रिय, दान और पूजा को ऐसा नहीं मानता जैसा कि इस बात को, कि सब धार्मिक सम्प्रदायो के सारतत्त्व की वृद्धि हो। इसी उद्देश्य से धर्ममहामात्र, स्त्रियाध्यक्ष महामात्र, व्रचभूमिक तथा अन्य अधिकारीगण नियत किये गये हैं। इसके फल स्वरूप सभी सम्प्रदायों और धर्मों की उन्नति होती है।

प्रज्ञापन १३

राज्याभिषेक के आठ वर्ष बाद देवताओ के प्रिय प्रियदर्शी राजा ने कलिंग देश को विजय किया। यहां से डेढ़ लाख मनुष्य क़ैद कर बाहर भेजे गये, एक लाख (रणक्षेत्र) में आहत हुए और इस से कई गुना (बाद में अकाल, महामारी आदि से) काल कवलित होगये। कलिंग विजय के बाद देवताओं के प्रिय

की धर्मशीलता, धर्म विस्तार और धर्मानुशासन में खूब अनुरक्ति बढ़ी। कलिंग युद्ध पर देवताओ के प्रिय को बड़ा पश्चाताप हुआ। देवताओं के प्रिय को इस बात से बड़ा खेद हुआ कि एक नये देश के विजय करने के समय कितने लोगों की हत्या करनी पड़ी, कितनों की मृत्यु हुई, कितने ही क़ैद किये गये, परन्तु देवताओं के प्रिय को यह विचार कर और भी दुःख और खेद हुआ कि वहा भी सब जगह ब्राह्मण, श्रमण तथा अन्य सम्प्रदाय के मनुष्य तथा गृहस्थ रहते हैं। जिन में सज्जनों, माता-पिता और गुरुजनो की सेवा, मित्र, परिचित, सहायक, सम्बन्धी तथा नौकर-चाकरों के प्रति अच्छा व्यवहार किया जाता है। ऐसे कितने ही लोगों का वहा वध या उन्हे प्रियजनों से पृथक कर देश निकाला कर दिया जाता है। जो स्वय सुरक्षित भी रहते हैं उनको भी अपने मित्र, परिचित, सहायक और सम्बन्धियों के विपत्ति मे पड़जाने से उनको भी बड़ी पीडा होती है। इस प्रकार यह सब विपत्ति वहा सभी को भोगनी पडती है, इससे देवताओं के प्रिय को बहुत दुःख होता है। यवन प्रदेश को छोडकर कोई भी ऐसा प्रदेश नहीं जहा ब्राह्मण, श्रमण आदि न रहते हों, और हर एक प्रदेश में मनुष्यों को किसी न किसी धर्म में प्रीति न होती हो।

कलिङ्ग देश की विजय के समय जितने आदमी मारे गये मरे या क़ैद हुए उनका शतांश अथवा सहस्रांश भी यदि मारा जाय या देश से निकाला जाय तो वह देवताओं के प्रिय को बड़े दुःख का कारण होगा। देवताओं का प्रिय चाहता है कि अपकार करने वाले को भी यदि क्षमा किया जा सकता है, तो

क्षमा करना चाहिये। जो वनवासी देवताओं के प्रिय के देश में रहते हैं, उसके पास उनके दमन करने की शक्ति होते हुए भी, वह चाहता है कि वह अपने बुरे कार्यों से लज्जित हों और सीधा समझ कर धर्म के मार्ग पर चलें जिससे उनके जीवन का नाश न हो।

देवताओं का प्रिय सब जीवों की रक्षा, संयम, समचर्या तथा हित चाहता है। धर्म की ही विजय को देवताओं का प्रिय मुख्य विजय समझता है। यह विजय देवताओं के प्रिय को अपने राज्य में तथा सब सीमांत प्रदेशों में छै सौ योजन तक जिसमें अन्तियोक नाम का यवन राजा तथा अन्य चार राजा—तुरमय, अन्तकिन, मग और अलिकसुंदर हैं— तथा दक्षिण की ओर चोड़, पांड्य, ताम्रपर्णी आदि के प्रदेशों तक में प्राप्त हुई। उसके राज्य में यवन, नभपंकि, कंबोज, नाभक, भोज, पैठनिक, आंध्र, पुलिंद आदि सब लोगों में देवताओं के प्रिय का धर्मानुशासन माना जाता है। जहां देवताओं के प्रिय के दूत पहुंच नहीं सके वहाँ के लोग भी देवताओं के प्रिय के धर्माचरण, धर्मविधान और धर्मानुशासन की प्रसिद्धि सुन कर उनका अनुसरण करते हैं। यह धर्म विजय उसे सब स्थानों पर बार-बार मिली है वह बहुत ही आनन्ददायक है परन्तु यह आनन्द तुच्छ है, देवताओं का प्रिय पारलौकिक कल्याण को ही बड़ा समझता है।

इसलिये यह धर्मलेख लिखवाया गया है कि जिस से मेरे पुत्र, पौत्र और प्रपौत्र नये देशों को विजय करने की इच्छा को त्याग दें। यदि कभी ऐसी विजय करना अनिवार्य ही हो तो उन्हें

दया और नम्रता से ही काम करना चाहिये। धर्म की ही विजय को उन्हे सच्ची विजय समझना चाहिये। इसी एक उद्देश्य को अपने सम्मुख रख उन्हें पूर्ण पराक्रम करना चाहिये। इससे लोक और परलोक दोनों में ही अच्छा फल मिलता है।

प्रज्ञापन १४

यह धर्म लेख देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा ने लिखवाये हैं। यह कहीं संक्षेप में हैं, कहीं मध्यमरूप मे और कहीं विस्तृतरूप में हैं। क्योकि सब स्थानो के लिये एक से लेख ठीक नहीं होते। मेरा साम्राज्य बहुत विस्तृत है, इसलिये बहुत से लेख लिखवाये गये हैं। आगे निरन्तर और भी लिखवाये जायेंगे। इन में कहीं कहीं कुछ बातें, मधुरता के कारण बार-बार लिखवाई गई हैं जिस से लोग उनका अनुसरण करें। इन लेखो में जो कुछ अपूर्णता रह गई है उस का कारण स्थान का अभाव है, और कुछ अंश को निकलवा देना लिपिकार का दोष होसकता है।

धौली और जौगड़ के प्रथक कलिंग लेख*

प्रज्ञापन १

देवताओं के प्रिय की आज्ञा है कि तोसली और समापा नगर के शासक महामात्रों से ऐसा कहा जाय, कि जो कुछ मैं ठीक समझता हूं उसको मैं कार्यरूप मे परिणत करता हूं, और अनेक उपायों से उसको पूरा करने का प्रयत्न करता हूं। इस कार्य को पूरा करने के लिये मेरी तुम लोगों को निम्न लिखित आज्ञा है, क्योंकि तुम लोग सहस्रों मनुष्यों के ऊपर शासन करते हो जिससे तुम उनके स्नेह के पात्र हो सकते हो।

सब मनुष्य मेरी सन्तान के समान हैं, और जिस प्रकार मैं चाहता हूं कि मेरी सन्तान इस लोक और परलोक मे सर्व प्रकार के हित और सुख को प्राप्त करें, उसी प्रकार, मैं चाहता हूं कि सब मनुष्य भी हर तरह के हित और सुख को प्राप्त करें। मेरे इस तत्त्व को तुम लोग पूरी तरह नहीं समझते, जो एकाध व्यक्ति इसको समझते भी हैं वह भी कुछ अंशो में ही समझते हैं। तुम लोग नीति की इस अच्छी बात पर ध्यान रखो कि कोई मनुष्य भी अकारण क़ैद न किया जाय और उसको कठिन क्लेश न मिले और न उसकी मृत्यु हो। एक मनुष्य के साथ-साथ अन्य

---

*धौली और जौगड की चट्टानों पर उक्त ग्यारह, बारह और तेरह प्रज्ञापन नहीं हैं, उनके स्थान पर उक्त दो प्रज्ञापन हैं।

बहुत से लोगों (उसके सम्बन्धियों और मित्रों) को बड़ा दुःख होता है। तुमको बड़ी सावधानी से न्याय करना चाहिये जिससे मनुष्यों को अकारण दण्ड, क्लेश और दुःख न मिले ।

यह कर्तव्य ईर्ष्या, क्रोध, निष्ठुरता, अकर्मण्यता, आलस्य और जल्दबाजी जैसी प्रवृत्तियाँ होने पर पूरा नहीं हो सकता। तुमको सदा प्रयत्न करना चाहिये कि यह प्रवृत्तियां तुम से दूर रहें। इस कर्तव्य का मूल, परिश्रम और 'धीरता है। जो शासन सम्बन्धी परिश्रम से थक कर बैठ जाता है वह आगे उन्नति नहीं कर सकता। अपने कर्तव्य पालन के लिये हर एक को अग्रसर होकर प्रयत्न करना चाहिये। इस प्रकार अपने कर्तव्य को समझो, और देवताओं के प्रिय की इस आज्ञा को सदा ध्यान में रखो और उसके प्रति अपना कर्तव्य पालन करो। इस आज्ञा को पालन करने का बहुत अच्छा फल होगा, इसका न पालन करना बड़ी विपत्ति का कारण होगा, जिस से न तो तुम स्वर्ग के भागी होगे न राजा ही तुम पर प्रसन्न होगा। जो अपने कर्तव्य को पालन न करेगा उस से मैं किञ्चिन्मात्र भी प्रसन्न न होऊंगा। परन्तु उसके पालन करने से तुम स्वर्ग के भागी होगे और मेरे प्रति जो तुम्हारा ऋण है उस से भी उऋण हो जाओगे। इस लेख को प्रत्येक पुष्य नक्षत्र के दिन सब को सुनना चाहिये। और दिनों में भी चाहे एक ही मनुष्य क्यों न हो इसको सुने। ऐसा करने से मेरी इच्छा पूरी हो सकेगी।

यह लेख इसलिये लिखा गया है कि जिस से नगर के शासनकर्ता सदा इस बात का प्रयत्न करें कि किसी को भी अकारण बन्द न किया जाय और न दण्ड ही दिया जाय। पान

पांच वर्ष के अन्तर पर मैं सरल हृदय वाले और दयालु महामात्र भेजा करूंगा। जो यह देखा करेंगे कि शासन-कर्ता मेरी आज्ञाओं का उचित पालन कर रहे हैं या नहीं। उज्जयिनी और तक्षशिला से भी कुमार इस काम के लिये इसी प्रकार महामात्रों को तीन-तीन वर्ष के अन्दर भेजेंगे। जब उक्त महामात्र दौरे पर निकलेंगे तो अपने अन्य कार्यों के साथ-साथ इस बात की भी जाँच पड़ताल करेंगे कि शासन सम्बन्धी राजा की उक्त आज्ञा का ठीक पालन हो रहा है या नहीं।

प्रज्ञापन २

देवताओं के प्रिय की आज्ञा से तोसली के कुमार और समापा के महामात्रों से कहा जाय कि जो कुछ मैं ठीक समझता हूं उसको मैं कार्यरूप में परिणत करता हूं, और अनेक उपायों से उसको पूरा करने का प्रयत्न करता हूं। इसको पूरा करने का मुख्य साधन मेरी तुम लोगों को निम्न लिखित आज्ञा।

सब मनुष्य मेरी सन्तान के समान हैं, और जिस प्रकार मैं चाहता हूं कि मेरी सन्तान इस लोक और परलोक में सब प्रकार से हित और सुख को प्राप्त करें, उसी प्रकार मैं चाहता हूं कि सब मनुष्य भी हर तरह के हित और सुख को प्राप्त करें।

अविजित सीमान्त निवासियों के हृदयों में यह प्रश्न उठता होगा कि राजा उनके प्रति कैसा व्यवहार करना चाहता है। उनके लिये मैं केवल यही चाहता हूं कि वे मुझसे न डरें, मुझमें विश्वास रखें, मुझसे उनको सुख मिलेगा, दुख नहीं। वे ध्यान रखें, कि क्षमा करने योग्य उनके कार्य सदा क्षमा किये जायेंगे।

उनका आचरण धार्मिक होना चाहिये जिससे यह इस लोक और परलोक में भी सुख प्राप्त कर सकें।

इस कारण मैंने यह आज्ञा तुमको दी है जिससे कि मैं इन (सीमान्त वासियों) के प्रति अपना कर्तव्य पूरा कर सकूँ, और तुम लोग (राज्य कर्मचारी) इस विषय में मेरी इच्छा और मेरे अचलप्रण को ठीक ठीक समझो। मेरी इस आज्ञा का पालन करते हुए तुम अपने कर्तव्य का पालन करो, जिससे उन लोगों में विश्वास उत्पन्न हो और वह समझें कि राजा उनके लिये पिता के समान है, वह उनको अपने ही समान प्रेम करता है और राजा के लिये वह उसकी सन्तान के समान हैं। मैं समस्त देश के लिये कर्मचारी नियुक्त करूंगा, जो यह देखेंगे कि तुम मेरी आज्ञाओं का आशय समझ सके हो या नहीं और मेरी उक्त इच्छा और दृढ निश्चय के अनुसार काम करते हो या नहीं तुम इन लोगों का (सीमान्त निवासी) अपने प्रति विश्वास उत्पन्न करा सकते हो या नहीं और उनका इस लोक तथा परलोक में हित और सुख बढा सकते हो या नहीं। ऐसा करने से तुम स्वर्ग का लाभ प्राप्त करोगे और साथ-साथ मेरे प्रति अपना कर्तव्य पालन करोगे।

इस कारण यह लेख लिखवाया गया है कि (अन्त) महामात्र सदैव सीमान्त निवासियों का विश्वास बढाते हुए उनको धार्मिक आचरण की ओर प्रवृत्त करें।

यह प्रज्ञापन हर चौथे महीने पुष्य-नक्षत्र के दिन सुनाया जाय, और बीच-बीच में भी चाहे एक ही मनुष्य को सुअवसर पर सुनाया जाय। ऐसा करने से तुम मेरी आज्ञा का पालन करोगे।

(ख) प्रधान स्तम्भ लेख

(देहली-तोपरा, देहली-मेरठ, इलाहाबाद, लौरिया, अरि-राज, लौरिया-नन्दनगढ़, रामपुरवा)

प्रज्ञापन १

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है, कि यह धर्म लिपि मैंने अपने अभिषेक के २६ वर्ष बाद लिखवाई। पूर्ण धर्म कामना, परीक्षण, पाप का भय, सेवा और उत्साह के बिना इस लोक और परलोक में सुख नहीं मिल सकता, मेरे प्रयत्न से लोगों का धर्मानुराग दिन पर दिन बढ़ता गया और आगे अवश्य और भी बढ़ता जायेगा। मेरे छोटे बड़े सभी राज्यकर्मचारी स्वयं धर्म का पालन करते हैं और दूसरे लोगों के भी उसका पालन कराते हैं। सीमान्त प्रदेशों के महामात्र भी ऐसा ही करते हैं। इन सबके लिये आज्ञा है कि धर्मानुसार लोगों का पोषण करो, धर्मानुसार शासन का विधान करो, उन्हें सुख पहुंचाओ और धर्मानुसार उनकी रक्षा करो।

प्रज्ञापन २

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है, कि धर्म का पालन करना ठीक है परन्तु धर्म क्या है? पापों का अभाव और अच्छे कामों का करना, अर्थात् दया, दान, पवित्रा और

उनका आचरण धार्मिक होना चाहिये जिससे वह इस लोक और परलोक में भी सुख प्राप्त कर सकें।

इस कारण मैंने यह आज्ञा तुमको दी है जिससे कि मैं इन (सीमान्त वासियों) के प्रति अपना कर्तव्य पूरा कर सकूँ, और तुम लोग (राज्य कर्मचारी) इस विषय में मेरी इच्छा और मेरे अचलप्रण को ठीक-ठीक समझो। मेरी इस आज्ञा का पालन करते हुए तुम अपने कर्तव्य का पालन करो, जिससे उन लोगों में विश्वास उत्पन्न हो और वह समझें कि राजा उनके लिये पिता के समान है, वह उनको अपने ही समान प्रेम करता है और राजा के लिये वह उसकी सन्तान के समान हैं। मैं समस्त देश के लिये कर्मचारी नियुक्त करूंगा, जो यह देखेंगे कि तुम मेरी आज्ञाओं का आशय समझ सके हो या नहीं और मेरी उक्त इच्छा और दृढ निश्चय के अनुसार काम करते हो या नहीं तुम इन लोगों का (सीमान्त निवासी) अपने प्रति विश्वास उत्पन्न करा सकते हो या नहीं और उनका इस लोक तथा परलोक में हित और सुख बढा सकते हो या नहीं। ऐसा करने से तुम स्वर्ग का लाभ प्राप्त करोगे और साथ-साथ मेरे प्रति अपना कर्तव्य पालन करोगे।

इस कारण यह लेख लिखवाया गया है कि (अन्त) महामात्र सदैव सीमान्त निवासियों का विश्वास बढाते हुए उनको धार्मिक आचरण की ओर प्रवृत्त करें।

यह मह्यापन हर चौथे महीने पुष्य-नक्षत्र के दिन सुनाया जाय, और बीच-बीच में भी चाहे एक ही मनुष्य को सुअवसर पर सुनाया जाय। ऐसा करने से तुम मेरी आज्ञा का पालन करोगे।

(ख) प्रधान स्तम्भ लेख

(देहली-तोपरा, देहली-मेरठ, इलाहाबाद, लौरिया, अरि-राज, लौरिया-नन्दनगढ़, रामपुरवा)

प्रज्ञापन १

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है, कि यह धर्म लिपि मैंने अपने अभिषेक के २६ वर्ष बाद लिखवाई। पूर्ण धर्म कामना, परीक्षण, पाप का भय, सेवा और उत्साह के बिना इस लोक और परलोक में सुख नहीं मिल सकता, मेरे प्रयत्न से लोगों का धर्मानुराग दिन पर दिन बढ़ता गया और आगे अवश्य और भी बढ़ता जायेगा। मेरे छोटे बड़े सभी राज्यकर्मचारी स्वयं धर्म का पालन करते हैं और दूसरे लोगों को भी उसका पालन कराते हैं। सीमान्त प्रदेशों के महामात्र भी ऐसा ही करते हैं। इन सबके लिये आज्ञा है कि धर्मानुसार लोगों का पोषण करो, धर्मानुसार शासन का विधान करो, उन्हे सुख पहुंचाओ और धर्मानुसार उनकी रक्षा करो।

प्रज्ञापन २

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है, कि धर्म का पालन करना ठीक है परन्तु धर्म क्या है? पापो का अभाव और अच्छे कामों का करना, अर्थात् दया, दान, पवित्रा और

सच्चाई से जीवन निर्वाह करना। कितने ही प्रकार से मैंने लोगों को ज्ञान चक्षु प्रदान किये। मनुष्य, पशु, तथा पक्षी सभी पर मैंने कितना उपकार किया, तथा उनके जीवन तक की रक्षा की। और कितने ही पुण्य के अन्य काम मैंने किये। इस लिये यह लेख मैंने लिखवाया है कि यह चिरस्थायी रहे और लोग इसका अनुसरण करें। जो इसके अनुसार काम करेगा वह शुभ कार्य करेगा।

प्रज्ञापन ३

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है। मनुष्य सदा यह सोचते हैं कि उन्हों ने अमुक अच्छे काम किये। परन्तु वह यह नहीं सोचते कि अमुक बुरा काम और पाप उन्हों ने किया। बुरे भले की पहचान अवश्य कठिन है परन्तु निम्न लिखित बातें निश्चय ही बुरी हैं, क्रूरता, निर्दयता, क्रोध, घमण्ड, और ईर्ष्या। इन बातों से अपने को कभी नष्ट न होने देना चाहिये। और इस बात का सदा विचार करना चाहिये कि किन बातों से इस लोक और परलोक में हित होगा।

प्रज्ञापन ४

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है कि, यह धर्म लिपि मैंने अपने अभिषेक के २६ वर्ष बाद लिखवायी। राजुक* लाखों मनुष्यों के ऊपर शासन करते हैं, मैंने आज्ञा दी है कि

---

* राजुक उस समय के न्यायाधीश थे।

किसी को दण्ड देना और उपहार देना उन्हीं के हाथ में रहे, जिससे वह अपना कर्तव्य निर्भय और निस्सकोच हो ठीक ठीक पालन करें और देश निवासियों के हित और सुख को बढावें। वे जानते हैं कि किन किन बातों से लोगों का सुख बढता है और किन बातों से दु ख। वे लोगों को धर्म पालन करने का आग्रह करते हैं जिनसे उनका इस लोक और परलोक में भी हित बढे। राजुक मेरी और मेरे नियत किये हुए राज्यकर्मचारियों की आज्ञाओं का पालन करते है। जिस प्रकार एक मनुष्य को अपने बच्चे को एक होशियार धाय को सौंप कर सतोप होता है कि वह बच्चे को ठीक रखेगी, इसी प्रकार जनता के हित और सुख बढाने के लिये राजुक लोग नियुक्त किये गये हैं जिस से कि वह अपने कर्तव्य को निर्भय, निस्सकोच, तथा निर्विघ्न पालन करें। मैंने आज्ञा दी है कि दण्ड और उपहार देना उन्हीं के हाथ में रहे। व्यवहार (शासन सम्बन्धी) में समानता होनी चाहिये और इसी प्रकार दण्ड देने मे भी। मेरी आज्ञा है कि जिन बन्दियों को प्राण दण्ड मिले उनको तीन दिन की मोहलत मिलनी चाहिये, जिससे उनके सम्बन्धी उनके प्राण बचाने का प्रयत्न कर सकें, अन्यथा वे लोग (जिनको मृत्यु का दण्ड मिला हो) इस बीच में दान, उपवासादि से अपने परलोक का हित बढा सकें। मेरी इच्छा है कि यदि किसी के जीवन काल का अन्त भी आगया हो वह भी परलोक में सुखी रहने का प्रयत्न कर सके। इस प्रकार जनता में धर्माचरण तथा सयम, और दानादि देने की भावना बढनी है।

प्रज्ञापन ५

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है कि अभिषेक के २६वर्ष पश्चात् मैंने निम्न लिखित जीवों का वध निषेध किया। सुक, सारिक, अरुन, चकवाक, हंस, नन्दीमुख, गेलाट, जतूक, अन्वाकपीलिक, अनठिकमछ, बेदवेयक, गंगापुपुट, संकुजमछ, कछुआ, पन्नस, सिरीमर, साण्ड, ओकपिण्ड, पलसत, स्वेत कपौत, ग्राम कपोत, और ऐसे सब चौपाए जो खाये न जाते हों या और किसी काम में आते हों ⊛। गर्भिणी या बच्चे वाली भेड़, बकरी, और सूकरी। छै महीने से छोटे उनके बच्चों को भी मारना मना है। मुर्गों की बध्रि न की जाय। भूसा जिसमें कीड़े पड़गये हों न जलाया जाय। व्यर्थ या उस में रहने वाले जीव जन्तुओं के मारने के लिये जङ्गल न जलाये जाँय। एक जीव को दूसरा जीव न खिलाया जाय। तीन चतुर्मास के दिन, पुष्य पूर्णिमा के समय तीन दिन, प्रतिपदा, चौदहवें और पन्द्रहवें दिन तथा अन्य त्यौहारों पर मछलियों का मारना और बेचना मना है। इन दिनों नागवन में या जलाशयों में अन्य जीव भी नहीं मारे जाँय। हर एक पक्ष के आठवें, चौदहवें और पन्द्रहवें दिन, पुष्य और पुनर्वसु के दिन, तीनो चतुर्मास के दिन और अन्य त्यौहारों पर, बैलों, बकरों और अन्य जानवरो की बध्रि नकी जाय। पुष्य

⊛ कौटिल्य ने अपने अर्थ शास्त्र में भी इनमें से कितने ही जीवों का वध निषेध किया है। II 26

पुनर्वसु, चतुर्मास के दिन और हर एक चतुर्मास के एक पक्ष में घोड़ों और बैलों पर छाप न लगाई जाय।

अपने अभिषेक तथा उसके बाद छब्बीसवां वर्ष पूरा होने से पूर्व के समय तक मैंने २५ बार बन्दियों की मुक्ति कराई ❀।

प्रज्ञापन ६

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है, कि अपने अभिषेक के १२ वर्ष समाप्त होने पर मैंने यह धर्म लिपि लिखवाई, जिससे लोगों का हित और सुख बढ़े और उनको मानने से विभिन्नरूप से धर्म की अभिवृद्धि हो। सब लोगों का हित और सुख बढ़ाने के लिये मैं केवल अपने सम्बन्धियों का ही ध्यान नहीं रखता हूं प्रत्युत निकट और दूर के सबही लोगों का मुझे सदा ध्यान रहता है। मैं ऐसी बातों की उन्हें शिक्षा देता हूं जिससे उनका सुख बढ़े। हर श्रेणी के लोगों का मुझे ध्यान है, और इसी प्रकार विभिन्न रूप से मैं सभी धार्मिक सम्प्रदायों का सत्कार और पूजन करता हूं। परन्तु उनमें स्वयं सम्मिलित होना मैं मुख्य बात समझता हूं। अपने अभिषेक के २६ वर्ष पूरा होने पर यह धर्म लेख लिखवाया गया है।

प्रज्ञापन ७

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है कि, पहले भी

❀ कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में भी उक्त दिनों में पशुओं का वध निषेध कियाहै, और समय समय पर बंदियों की मुक्ति कराने को कहा है।

अर्थशास्त्र पु० १३ अ० ५

प्रज्ञापन ५

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है कि अभिषेक के २६वर्ष पश्चात् मैंने निम्न लिखित जीवों का वध निषेध किया। सुक, सारिक, अरुन, चक्रवाक, हंस, नन्दीमुख, गेलाट, जतूक, अन्वाकपीलिक, अनठिकमछ, वेदवेयक, गगापुपुट, सकुलमछ, कछुआ, पन्नस, सिरीमर, साण्ड, ओकपिण्ड, पलसत, स्वेत कपोत, ग्राम कपोत, और ऐसे सब चौपाए जो खाये न जाते हों या और किसी काम में आते हों ॐ। गर्भिणी या बच्चे वाली भेड़, बकरी, और सूकरी। छै महीने से छोटे उनके बच्चों को भी मारना मना है। मुर्गों की वध्रि न की जाय। भूसा जिसमें कीड़े पड़गये हों न जलाया जाय। व्यर्थ या उस में रहने वाले जीव जन्तुओं के मारने के लिये जङ्गल न जलाये जाँय। एक जीव को दूसरा जीव न खिलाया जाय। तीन चतुर्मास के दिन, पुष्य पूर्णिमा के समय तीन दिन, प्रतिपदा, चौदहवें और पन्द्रहवें दिन तथा अन्य त्यौहारों पर मछलियों का मारना और बेचना मना है। इन दिनों नागवन में या जलाशयों में अन्य जीव भी नहीं मारे जाँय। हर एक पक्ष के आठवें, चौदहवें और पन्द्रहवें दिन, पुष्य और पुनर्वसु के दिन, तीनों चतुर्मास के दिन और अन्य त्यौहारों पर, बैलों, बकरों और अन्य जानवरों की वध्रि न की जाय। पुष्य

ॐ कौटिल्य ने अपने अर्थ शास्त्र में भी इनमें से कितने ही जीवों का वध निषेध किया है। II 26

पुनर्वसु, चतुर्मास के दिन और हर एक चतुर्मास के एक पक्ष में घोड़ों और बैलों पर छाप न लगाई जाय।

अपने अभिषेक तथा उसके बाद छब्बीसवां वर्ष पूरा होने से पूर्व के समय तक मैंने २५ बार बन्दियों की मुक्ति कराई ॐ।

प्रज्ञापन ६

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है, कि अपने अभिषेक के १२ वर्ष समाप्त होने पर मैंने यह धर्म लिपि लिखवाई, जिससे लोगों का हित और सुख बढ़े और उनको मानने से विभिन्नरूप से धर्म की अभिवृद्धि हो। सब लोगों का हित और सुख बढ़ाने के लिये मैं केवल अपने सम्बन्धियों का ही ध्यान नहीं रखता हूं प्रत्युत निकट और दूर के सबही लोगों का मुझे सदा ध्यान रहता है। मैं ऐसी बातों की उन्हें शिक्षा देता हूं जिससे उनका सुख बढ़े। हर श्रेणी के लोगों का मुझे ध्यान है, और इसी प्रकार विभिन्न रूप से मैं सभी धार्मिक सम्प्रदायों का सत्कार और पूजन करता हूं। परन्तु उनमें स्वयं सम्मिलित होना मैं मुख्य बात समझता हूं। अपने अभिषेक के २६ वर्ष पूरा होने पर यह धर्म लेख लिखवाया गया है।

प्रज्ञापन ७

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है कि, पहले भी

ॐ कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में भी उक्त दिनों में पशुओं का वध निषेध कियाहै, और समय समय पर बंदियों की मुक्ति कराने को कहा है।

अर्थशास्त्र पु० १३ अ० ५

राजाओं ने यह चाहा था कि लोगों में धर्म बढ़े जिस से उन की उन्नति हो। परन्तु लोगों की इस प्रकार अधिक उन्नति नहीं हुई। इस विषय में मैंने यह विचारा कि किस प्रकार से मनुष्यों में धर्माचरण बढ सकता है, किस प्रकार धर्म द्वारा उनकी उन्नति हो सकती है, और मैं किस प्रकार उन में धार्मिक भावनाओं की अभिवृद्धि कर उनका उत्थान कर सकता हू। इस विषय में मेरा विचार है, कि मैं धर्मकी प्रशस्ति कराऊँ और लोगों में धर्म सम्बन्धी शिक्षा देनेकी आज्ञा दूँ, जिसको सुनकर मनुष्य उसका पालन करेंगे और उनकी इस धार्मिक उन्नति से उनका उत्थान होगा।

इस प्रकार मैंने अपने धर्म पर कितने ही प्रज्ञापन निकलवाये और विविध प्रकार से लोगों को धार्मिक शिक्षा दिलवाई। इस धार्मिक शिक्षा को लोगों को समझाने और उस का प्रचार करने को मैंने राजुक तथा अन्य कर्मचारियों को आज्ञा दी। और इसी लिये मैंने धर्म-स्तम्भ स्थापित किये और धर्म प्रज्ञापन लिखवाये।

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है। मनुष्यों और पशुओं के आराम के लिये मैंने सडकों पर वृक्ष लगवाये, स्थान-स्थान पर आम के बाग लगवाये, आठ-आठ कोस पर कुऐं खुदवाये, स्थान स्थान पर विश्राम गृह बनवाये, और स्थान-स्थान पर मनुष्यों और पशुओं के पानी पीने का प्रबन्ध किया। परन्तु ऐसा करना कोई बडी बात नहीं थी। ऐसे सासारिक सुख बढाने के कार्य तो पूर्ववर्ती कितने ही राजाओं ने किये। मैंने यह सब काम (विशेष कर) इसलिये किये कि लोगों में भी दान आदि देकर

सार्वजनिक सुख को बढ़ाने की धार्मिक प्रवृत्ति बढ़े। अथवा राजा को देखकर और लोग भी ऐसे ही काम करें।

मेरे धर्म महामात्र विविध प्रकार से गृहस्थों तथा परिव्राजकों के सुख के बढ़ाने के कामों में लगे हैं, और विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों, (बौद्ध) संघ, आजीविक, ब्राह्मण, निर्ग्रन्थ आदि सब ही सम्प्रदायों के साधनों की देख रेख भी करते हैं। भिन्न भिन्न धार्मिक सम्प्रदायों के लिये भिन्न-भिन्न महामात्र नियुक्त किये गये हैं। यह धर्म महामात्र और कितने ही अन्य मुख्य कर्मचारी मेरे तथा रानियों द्वारा दिये गये, यहां राजधानी में तथा अन्य नगरों में, दान का ठीक-ठीक प्रबन्ध करते हैं। और इसी प्रकार दूसरे धर्म महामात्र मेरे पुत्रों तथा अन्य रानियों के पुत्रों के दिये हुये दानों का प्रबन्ध करते हैं, जिस से सब जगह धार्मिक आचरण की उन्नति हो। ऐसे धर्म-आचरण और धर्म के कामों से लोगों में दया, दान, सचाई, पवित्रता, नम्रता और भलाई बढ़ती है।

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है, कि जितने भी अच्छे काम मैंने किये, लोगों ने उनका अनुसरण किया, और वैसे ही काम किये। इन कामों की इस प्रकार कितनी उन्नति हुई, साथ साथ लोगों में माता-पिता और गुरुजनों की शुश्रूषा, वृद्धजनों, श्रमणों, ब्राह्मणों, गरीब, पीड़ित तथा नौकरों-चाकरों के साथ सद् व्यवहार भी बढ़ा।

देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा कहता है। लोगों में यह धार्मिक उन्नति दो कारणों से हुई, धर्म सम्बन्धी नियमों से

और लोगो को धर्म का आशय समझाने अथवा धर्म-शिक्षण से। इन दोनो मे धर्म नियमो का इतना महत्त्व नहीं, जितना धर्म शिक्षण का, और उससे उन्नति भी अधिक हुई। उदाहरणार्थ मैंने यह नियम बनाया कि अनेक प्रकार के जीव न मारे जाँय, और ऐसे ही और भी नियम बनाये। लेकिन इसका असली तत्व समझाने से धर्म की अधिक उन्नति हुई। क्योंकि लोगो में अहिंसा और जीव की रक्षा करने की प्रवृत्ति बहुत बढी।

इस कारण यह लेख लिखवाया गया है कि मेरे पुत्र, पौत्र प्रपौत्र आदि के समान कालान्त तक जब तक सूर्य और चन्द्र रहे यह लेख बना रहे, और लोग इसके अनुसार चलें। ऐसा करने से उनको इस लोक और परलोक मे भी सुख मिलेगा। अपने अभिषेक के २७ वर्ष होने पर यह धर्मलिपि मैंने लिखवाई।

देवताओं के प्रिय की आज्ञा है कि यह धर्मलिपि जहा जहा शिलास्तम्भ हो या शिला फलक हो खुदवाई जाय।

(ग) गौण शिला लेख

(सहसराम, रूपनाथ, बैराट, मस्की, गवीमठ, ब्रह्मगिरि, सिद्धपुर, जतिङ्ग रामेश्वर)

प्रज्ञापन १

देवताओं का प्रिय * कहता है कि ढाई वर्ष से कुछ अधिक हुआ मैं प्रकट रूप से शाक्य होगया हूं (अथवा बौद्ध शाक्य का अनुयायी होगयाहूं †)। परन्तु आरम्भ में मैंने अधिक उद्योग नहीं

---

* ब्रह्मगिरि, सिद्धपुर और जतिंग रामेश्वर वाले लेख इस प्रकार से आरम्भ होते हैं।

"सुवर्णगिरि से आर्यपुत्र और महामात्रों की ओर से इसला के महामात्रों के कुशल रहने का सन्देश भेजा जाय और उन से कहा जाय कि देवताओं के प्रिय की आज्ञा है ''''''''"। इसके बाद इन चट्टानों पर प्रथम प्रज्ञापन ऊपर के ही समान है।

मालूम होता है कि सुवर्णगिरि दक्षिण में मैसूर प्रान्त का शासन केन्द्र था, जहां सम्राट् का कोई वंशज, जिसे आर्यपुत्र कह कर अभिहित किया गया है, शासक नियुक्त था। इसला इसी प्रदेश के अन्दर कोई छोटा शासन केन्द्र था।

† मस्की के लेख में इस शब्द के स्थान पर "बुद्ध शाके" है, और सहसराम, बैराट और सिद्धपुर वाले लेखों में इसके स्थान पर "उपासक" है।

किया। और एक वर्ष से अधिक हुआ जब से मैं संघ में आया हूं ✿ तब से मैंने अच्छी तरह उद्योग किया है। इस बीच में मैंने मनुष्यों और आचार्यों (देवा) में जो पृथक पृथक थे एकता स्थापित की †। यह सब उद्योग का ही फल है। उद्योग से छोटे बड़े सभी स्वर्ग प्राप्त कर सक्ते हैं। यह प्रज्ञापन इस लिये लिखवाया गया कि छोटे, बड़े सभी उद्योग करें, और सीमान्त निवासी भी इससे अभिज्ञ हों, और यह चिरस्थाई रहे। इस की डेढ़ गुनी और अधिक उन्नति होगी।

यह प्रज्ञापन, अवसर के अनुसार शिलाओं और स्तम्भों पर लिखवाया जाय §। बुद्ध निर्वाण के २५६ वर्ष ¶ बाद यह लेख खुदवाया गया।

✿ इस से विदित होता है कि अशोक भिक्षु बनकर बौद्ध संघ में सम्मिलित होगया था।

† अशोक के इस लेख में उसके समय की उसी के परिश्रम द्वारा एकत्रित की हुई बौद्ध महासभा और संघ में एकता स्थापित करने की ओर संकेत मिलता है।

§ इस के पश्चात रूपनाथ के लेख में इतना और लिखा है। "इसके अनुसार जहां तक तुम्हारा (राज्य कर्मचारी जिनको प्रज्ञापन की प्रति भेजी गई) अधिकार हो वहांतक इसका प्रचार कराओ।

¶ यह अर्थ हमने 'व्युठेन' शब्द का किया है, यह शब्द कौटिल्य के अर्थशास्त्र के "व्युष्टम" का प्राकृतरूप प्रतीत होता है जिसका अर्थ तिथि होता है। राजवर्षं मास. पक्षो दिवसश्च व्युष्टम् (अ० शा० पु० २ अ० ६)

※प्रज्ञापन २

देवताओं का प्रिय कहता है कि माता-पिता और गुरु जनों की सेवा करनी चाहिये। प्राणियों पर दया करनी चाहिये। सत्य बोलना चाहिये। ऐसे धार्मिक आचरण का सदा पालन हो। इसी प्रकार विद्यार्थी को आचार्य के साथ अच्छा व्यवहार करना चाहिये। सम्बन्धियों का भी परस्पर अच्छा व्यवहार हो। यह प्राचीन अच्छी रीति है। और ऐसा करने से लोग आयुष्मान होते हैं। इसी के अनुसार सबको चलना चाहिये।

(इस लेख के अन्त में खरोष्ठी लिपि में खोदने वाले ने निम्न शब्द लिख दिये हैं) "चपड लिपीकार ने यह लिखा है"। यह प्रज्ञापन उक्त पहिले प्रज्ञापन के बाद केवल मैसूर प्रान्त के ब्रह्मगिरि, सिद्धपुर और जटिङ्ग रामेश्वर वाले लेखों में है।

कलकत्ता-बैराट (भाब्रू) प्रज्ञापन

मगध का राजा प्रियदर्शी संघ का अभिवादन करता है और आशा करता है कि संघ के सब लोग सकुशल हैं। हे

※ बुद्ध निर्वाण के २५६ वर्ष पश्चात यह लेख अशोक ने लिखवाया, इस बात की चर्चा हमने सविस्तार अपने निम्न लेखों में की है।

(1) Chronology of Asokan Inscriptions Indian Historical Journal Vol XVII. Part 3. (2) Buddha Nirvana and some other dates Indian culture Vol. V. Jan 1939.

भदन्तगण, आपको मालूम है कि मेरे हृदय में बौद्ध धर्म और संघ के प्रति कितना मान और श्रद्धा है। वैसे तो जो कुछ भगवान् बुद्ध ने कहा है वह अच्छा ही कहा है परन्तु मैं अपना यह कर्तव्य समझता हू कि आपको बताऊँ कि मेरे अनुसार भगवान् का बताया हुआ सत्य धर्म, जो चिरस्थाई रहेगा, निम्न लिखित ग्रन्थों मे मिलेगा। विनय समुकस, आर्य वश, अनागत भय, मुनिगाथा मौनेयसूत्र, उपतिष्य प्रश्न, राहुलवाद जिसे भगवान् बुद्ध ने झूठ बोलने के विषय मे कहा है *। मैं चाहता हू कि आपस में मिल कर भिक्षु और इसी प्रकार भिक्षुणी भी इन ग्रन्थों को पढें और इनका मनन करें। और ऐसा ही उपासक पुरुष और स्त्रिया भी करें। इस लिये यह लेख मैंने लिखवाया है, जिससे लोग मेरे अभिप्राय को समझें।

---

* यह सात ग्रन्थ कौन से है और कहा–कहा मिलते है इनका अब निश्चितरूप से पता लगगया है यह पाली के निम्न लिखित ग्रन्थो में मिलते है।

विनय समुकस—पातिमोक्ख
आर्य वश —अगुत्तर निकाय, द्वितीय भाग
अनागत भय —अगुत्तर निकाय, तृतीय भाग
मुनिगाथा —सुत्तनिपात, प्रथम भाग
मोनय सूत —सुत्तनिपात, तृतीय भाग
उपतिष्य प्रश्न —सुत्तनिपात, चतुर्थ भाग
राहुलवाद —मज्झिमनिकाय, प्रथम भाग

(घ) गौण स्तम्भ लेख

(अ) सांची, सारनाथ, इलाहाबाद।

देवताओं के प्रिय की आज्ञा है, * कि भिक्षु और भिक्षुणिओं के संघ में एकता स्थापित कीगई है, जो मेरे पुत्र, पौत्र और प्रपौत्र के अस्तित्व तक तथा सूर्य और चन्द्र के प्रकाशमान रहने तक क़ायम रहेगी कोई संघ को तोड़ने का प्रयत्न न करे। जो कोई भिक्षु या भिक्षुणी ऐसा करे उसको श्वेत वस्त्र पहनाकर बाहर निकाल दिया जाय। मेरी इच्छा है कि संघ कभी विभाजित न हो और चिरस्थायी रहे।

(उक्त प्रज्ञापन के साथ-साथ सारनाथ के स्तम्भ पर यह और लिखा है)। "यह प्रज्ञापन भिक्षु और भिक्षुणिओं के संघ के सम्मुख रखा जाय। देवताओं के प्रिय की यह भी आज्ञा है कि इस प्रज्ञापन की एक प्रति तुम्हारे (महामात्र के) दफ़्तर में रखी जाये, और एक प्रति उपासकों के वास्ते रखी जाय जिससे प्रत्येक उपवास के दिन वे इस को पढ़कर प्रोत्साहित हों।

---

* इलाहाबाद के स्तम्भ का उक्त लेख इस प्रकार प्रारम्भ होता है, "कौशाम्बी के महामात्रों को देवताओं का प्रिय आज्ञा देता है"। यह प्रज्ञापन कौशाम्बी के प्रज्ञापन के नाम से पुकारा जाता है क्योंकि यह कौशाम्बी के महामात्रों के लिये लिखा गया था।

इसे ही हर एक उपवास के दिन महामात्रों को भी इस प्रज्ञापन पर ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिये। जहा तक तुम्हारे (महामात्र के) अधीनस्थ प्रदेश है वहा सब जगह उक्त प्रज्ञापन का प्रचार कराओ'।

(ब) इलाहाबाद वाले स्तम्भ पर छै प्रधान स्तम्भ लेखों और उक्त प्रज्ञापन के साथ-साथ, रानी की ओर से अशोक का निम्न प्रज्ञापन भी है:—

"देवताओं के प्रिय की सब महामात्रों को आज्ञा है। द्वितीय रानी कालुवाकी, तीवल का माता की इच्छानुसार आम-वाटिका, बाग, दानगृह या और जो कुछ लोग दान दें वे उन्हीं के नाम से लिखने चाहियें।

(स) रुम्मिनीदेई स्तम्भ

अपने अभिषेक के पश्चात् २० वर्ष समाप्त होने पर देव-ताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा स्वय इस स्थान पर आया और अर्चना की क्योंकि इस स्थान पर बुद्ध शाक्यमुनी का जन्म हुआ था। जिस स्थान पर भगवान् बुद्ध का जन्म हुआ था उसने वहा एक पत्थर की शिला और एक स्तम्भ स्थापित करवाया। उसने लुम्मिनी के ग्राम के करों को क्षमा कर दिया वह केवल आठवा हिस्सा कर के रूप में देगा।

(ड) कपिलेश्वर शिलालेख

अपने अभिषेक के २० वर्ष होने पर देवताओं का प्रिय प्रियदर्शी राजा स्वय इस पवित्र स्थान पर जहा बुद्ध शाक्य मुनि का जन्म हुआ था आया और अर्चना की। उसने यहा एक

पत्थर की शिला लगवायी और एक स्तम्भ बनवाया। भगवान् के जन्म स्थान लुम्मिनी ग्राम के करों को उसने क्षमा कर दिया वह केवल आठवां हिस्सा कर के रूप में देगा। व्यूठे २४०।

(इ) निगलिया स्तम्भ

अपने अभिषेक के १४ वर्ष होने पर देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा ने बुद्ध कोनाकमन के स्तूप को दुगना बड़ा करवाया।

अभिषेक के २० वर्ष होने पर, वह स्वय इस स्थान पर गया और पूजा की, और यहाँ एक शिला स्तम्भ बनवाया।

(ग) बराबर गुफ़ा लेख

(१) प्रियदर्शी राजा ने अपने अभिषेक के १२ वर्ष पश्चात यह गुफा आजीविकों को दान दी।

(२) प्रियदर्शी राजा ने अपने अभिषेक के १२ वर्ष समाप्त होने पर खलतिक पहाड़ की यह गुफ़ा आजीविकों को दान दी।

(३) प्रियदर्शी राजा के अभिषेक के १९ वर्ष होने पर सुन्दर खलतिक पर्वत की यह गुफा ※ मैंने, वर्षा से बचने के लिये आजीविकों को दान दी।

※ इस में सन्देह है कि यह गुफा स्वयं अशोक या अन्य किसी व्यक्ति ने दान दी। क्यों कि अन्य दो गुफाएं स्वयं अशोक ही ने आजीविकों को दान दी थीं इस से यह गुफा भी उसने ही दान दी होगी।

भाग ३

अशोक के उत्कीर्ण लेखों का मूल पाठ

अध्याय १३

प्रधान शिलालेख

गिरनार

प्रज्ञापन १

(१) इयं धमलिपी देवानप्रियेन प्रियदसिना राञा लेखापिता (२) इध न किंचि जीव आरभित्पा प्रजूहितव्य (३) न च समाजो कतव्यो (४) बहुक हि दोस समाजम्हि पसति देवानप्रियो प्रियदसि राजा (५) अस्ति पि तु एकचा समाजा साधुमता देवानप्रियस प्रियदसिनो राञो (६) पुरा महानसम्हि देवानप्रियस प्रियदसिनो राञो अनुदिवसं बहूनि प्राणसतसहस्रानि आरभिसु सूपाथाय (७)से अज यदा अय धमलिपी लिखिता ती एव प्राणा आरभरे सूपाथाय द्वो मोरा एको मगो सो पि मगो न ध्रुवो (८) एते पि त्री प्राणा पछा न आरभिसरे।

प्रज्ञापन २

(१) सर्वत विजितम्हि देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो

एवमपि प्रचंतेसु यथा चोडा पाडा सतियपुतो केतलपुतो आ तम्ब पंणी अंतियको योनराजा ये वा पि तस अंतियकस सामीपं राजानो सर्वत्र देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो द्वे चिकीछ कता मनुसचिकीछा च पसुचिकीछा च (२) ओसुढानि च यानि मनुसोपगानि च पसोपगानि च यत यत नास्ति सर्वत्रा हारापितानि च रोपापितानि च (३) मूलानि च फलानि च यत यत्र नास्ति सर्वत हारापितानि च रोपापितानि च (४) पंथेसू कूपा च खानापिता व्रछा च रोपापिता परिभोगाय पसुमनुसानं ।

प्रज्ञापन ३

(१) देवानंपियो पियदसि राजा एवं आह (२) द्वादसवासाभिसितेन मया इदं आञपितं (३) सर्वत विजिते मम युता च राजूके च प्रादेसिके च पंचसु पंचसु वासेसु अनुसंयानं नियातु एतायेव अथाय इमाय धंमानुसस्टिय यथा अञाय पि कंमाय (४) साधु मातरि च पितरि च सुस्रूसा मित्रसंस्तुतञातीनं बाम्हणसमणानं साधु दानं प्राणानं साधु अनारंभो अपव्ययता अपभांडता साधु (५) परिसा पि युते आञपयिसति गणनायं हेतुतो च व्यंजनतो च।

प्रज्ञापन ४

(१) अतिकातं अंतरं बहूनि वाससतानि वढितो एव प्राण-

रंभो विहिंसा च भूतानं ञातीसु असंप्रतिपती ब्राम्हणस्रमणानं असंप्रतीपती (२) त अज देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो धंमचरणेन भेरीघोसो अहो धंमघोसो विमानदर्सणा च हस्तिदसणा च अगिखंधानि च अञानि च दिव्यानि रुपानि दसयित्पा जनं(३) यारिसे बहूहि वाससतेहि न भूतपुवे तारिसे अज वढिते देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो धंमानुसस्टिया अनारंभो प्राणानं अविहीसा भूतानं ञातीनं संपटिपती ब्रम्हणसमणानं संपटिपती मातरि पितरि सुसुसा थैरसुसुसा (४) एस अञे च बहुविधे धंमचरणे वढिते (५) वढयिसति चेव देवानंप्रियो प्रियदसि राजा धंमचरणं इदं (६) पुत्रा च पोत्रा च प्रपोत्रा च देवानंप्रियस प्रियदसिनो राञो प्रवधयिसंति इद धंमचरणं आव सवटकपा धंमम्हि सीलाम्हि तिस्टंतो धंमं अनुसासिसंति (७) एस हि सेस्टे कंमे य धंमानुसासनं (८) धंमचरणे पि न भवति असीलस (६) त इमम्हि अथम्हि वधी च अहीनी च साधु (१०) एताय अथाय इदं लेखापितं इमस अथस वधि युजंतु हीनि च नो लोचेतव्या (११) द्वादसवासाभिसितेन देवानंप्रियेन प्रियदसिना राञा इदं लेखापितं।

प्रज्ञापन ५

(१) देवानंप्रिय पियदसि राजा एवं आह (२) कलाणं दुकरं (३) यो आदिकरो कलाणस सो दुकरं करोति (४) त मया बहु कलाणं कतं (५) त मम पुता च पोता च परं च तेन य मे अपचं आव संवटकपा अनुवतिसरे तथा सो सुकतं कासति (६) यो तु

एत देसं पि दापेसति सो दुकतं कासति (७) सुकरं हि पापं (८) अतिकातं अंतरं न भूतप्रुवं धंममहामाता नाम (९) त मया त्रैदस-वासाभिसितेन धंममहामाता कता (१०) ते सवपासंडेसु व्यापता धाम धिस्टानाय .... धंमयुतस च योणकंबोजगंधारानं रिस्टिकपेतेणिकानं ये वा पि अंने आपराता (११) भतमयेसु व ....सुखाय धंमयुतानं अपरिगोधाय व्यापता ते (१२) बंधनवधस पटिविधानाय .... प्रजा कतामीकारेसु वा थैरेसु वा व्यापता ते (१३) पाटलिपुते च बाहिरेसु च ...... ये वा पि मे अवे आतिका सर्वत व्यापता ते (१४) यो अयं धंमनिस्रितो ति व.......... ते धंममहामाता (१५) एताय अथाय अयं धंमलिपी लिखिता ...

प्रज्ञापन ६

(१) देवा .. सि राजा एवं आह (२) अतिक्रातं अंतरं न भूतप्रुव सव ल अथकंमे व पटिवेदना वा (३) त मया एवं कतं (४) सवे काले भुंजमानस मे ओरोधनम्हि गभागारम्हि वचम्हि व विनीतम्हि च उयानेसु च सवत्र पटिवेदका स्टिता अथे मे जनस पटिवेदेथ इति (५) सर्वत्र च जनस अथे करोमि (६) य च किंचि मुखतो आनपयामि स्वयं दापकं वा स्नावापकं वा य वा पुन महामात्रसु आचायिके अरोपितं भवति ताय अथाय विवादो निझती व संतो परिसायं आनंतरं पटिवेदेतव्यं मे सर्वत्र सर्वे काले (७) एवं मया आञपितं (८) नास्ति हि मे तोसो उस्टानम्हि अथसंती-

रणाय व (६) कतव्यमते हि मे सर्वलोकहितं (१०) तस च पुन एस मूले उस्टानं च अथसंतीरणा च (११) नास्ति हि कंमतरं सर्वलोकहितत्पा (१२) य च किंचि पराक्रमामि अहं किंति भूतानं आनंणं गछेयं इध च नानि सुखापयामि परत्रा च स्वगं आराधयंतु त (१३) एताय अथाय अयं धंमलिपी लेखापिता किंति चिरं तिस्टेय इति तथा च मे पुत्रा पोता च प्रपोत्रा च अनुवतरं सवलोकहिताय (१४) दुकरं तु इदं अञत्र अगेन पराक्रमेन। .

प्रज्ञापन ७

(१) देवानंपियो पियदसि राजा सर्वत इछति सवे पासंडा वसेयु (२) सवे ते सयमं च भावसुधि च इछति (३) जनो तु उचावचछंदो उचावचरागो (४) ते सर्वं व कासंति एकदेसं व कसंति (५) विपुले तु पि दाने यस नास्ति सयमे भावसुधिता व कतञता व दढभतिता च निचा बाढं।

प्रज्ञापन ८

(१) अतिकातं अंतरं राजानो विहारयातां ञयासु (२) एत मगव्या अञानि च एतारिसनि अभीरमकानि अहुंसु (३) सो देवानंप्रियो पियदसि राजा दसवर्साभिसितो संतो अयाय संबोधि (४) तेनेसा धंमयाता (५) एतयं होति बाम्हणसमणानं दसणे च दाने च थैरानं दसणे च हिरंणपटिविधानो च जानपदस

च जनम दस्पनं धंमानुसस्टी च धमपरिपुछा च तत्रोपया (६) एमा भुय रति भवति देवानंपियस प्रियदसिनो राञो भागे अंबे।

प्रज्ञापन ६

(१) देवानंपियो प्रियदसि राजा एव आह (२) अस्ति जनो उचावचं मंगलं करोते आबाधेसु वा आवाहवीवाहेसु वा पुत्रलाभेसु वा प्रवासंम्हि वा एतम्ही च अञम्हि च जनो उचावचं मंगलं करोते (३) एत तु महिडायो बहुकं च बहुविधं च छुदं च निरथं च मंगलं करोते (४) त कतव्यमेव तु मगलं (५) अपफलं तु खो एतरिसं मंगलं (६) अयं तु महाफले मंगले य धममंगले (७) ततेत दासभतकम्हि सम्यप्रतिपती गुरूनं अपचिति साधु पाणेसु समयो साधु बम्हणसमणानं साधु दानं एत च अञ च एतारिसं धंममंगलं नाम (८) त वतव्यं पिता व पुतेन वा भात्रा वा स्वामिकेन वा इदं साधु इदं कतव्य मंगलं आव तस अथस निस्टानाय (६) अस्ति च पि वुतं साधु दन इति (१०) न तु एतारिसं अस्ता दानं व अनगहो व यारिसं धंमदानं व धमनुगहो व (११) त तु खो मित्रेन व सुहदयेन वा ञातिकेन व सहायन व ओवादितव्यं तम्हि तम्हि पकरणे इदं कचं इदं साध इति इमिना सक स्वगं आराधेतु इति (१२) कि च इमिना कतव्यतरं यथा स्वगारधी।

प्रज्ञापन १०

(१) देवानंपियो प्रियदसी राजा यसो व कीति व न महा-थावहा मबते अञत तदात्पनो दिघाय च मे जनो धंमसुसूंसा सुलुसना धंमवुतं च अनुविधियतां (२) एतकाय देवानंपिया पियदसि राजा यसो व किति व इछति (३) यं तु किचि परिकमते देवानं प्रियदसि राजा त सवं पारत्रिकाय किंति सकले अपपरिस्रवे अस (४) एस तु परिसवे य अपुंवं (५) दुकरं तु खो एतं छुदकेन व जनेन उसटेन व अञत्र अगेन पराक्रमेन सवं परिचजित्पा (६) एत तु खो उसटेन दुकरं।

प्रज्ञापन ११

(१) देविनंप्रियो पियदसि राजा एवं आह (२) नास्ति एतारिस दानं यारिस धंमदान धंमसंस्तवो वा धंमसविभागो वा धंमसंबधो व (३) नत इद भवति दासभतकम्हि सम्यप्रतिपती मातरि पितरा साधु सुस्रुसा मितसस्तुतञातिकानं बाम्हणस्रमणान साधु दानं प्राणानं अनारंभो साधु (४) एत वतव्य पिता व पुत्रेन व भाता व मितसस्तुतञातिकेन व आव पटीवेसियेहि इद साधु इद कतव्यं (५) सो तथा करु इलोकचस आरधो होति परत च अनंत पुञ्ञं भवति तेन धमदानेन।

प्रज्ञापन १२

(१) देवानंपिये पियदसि राजा सवपासंडानि च पवजितानि च घरस्तानि च पूजयति दानेन च विवाधाय च पूजाय पूजयति ने (२) न तु तथा दानं व पूजा व देवानपियो मंञते यथा किति सारवढी अस सवपासडानं (३) सारवढी तु वहुविधा (४) तस तु इदं मूलं य वचिगुती किति, आत्पपासडपूजा व परपासंडगरहा व नो भवे अप्रकरणम्हि लहुका व अस तम्हि तम्हि प्रकरणे (५) पूजेतया तु एव परपासंडा तेन तन प्रकरणेन (६) एवं करुं आत्पपासडं च वढयति परपासंडस च उपकरोति (७) तदंञया करोतो आत्पपासड च छणति परपासडस च पि अपकरोति (८) यो हि कोचि आत्पपासंड पूजयति परपासंडं व गरहति सर्वं आत्पपासडभतिया किंति आत्पपासंड दीपयेम इति सो च पुन तथ करातो आत्पपासंडं बाढतरं उपहनाति (९) त समवायो एवं साधु किंति अञमंञस धंमं स्रुणारु च सुसुंसेर च (१०) एवं हि देवानपियस इछा किंति सवपासंडा बहुस्रुता च असु कलाणागमा च असु (११) ये च तत्र तत प्रसंना तेहि वतव्यं (१२) देवानपियो नो तथा दान व पूजां व मंञते यथा किंति सारवढी अस सर्वपासडानं (१३) बहका च एताय अथा व्यापता धंममहामाता च इथीझखमहामाता च वचभूमीका च अञे च निकाया (१४) अयं च एतस फल य आत्पपासंडवढी च होति धमस च दीपना।

प्रज्ञापन १३

(१) ञो कलिगा वज वढे सतसह-

स्रमात्रं तन्ना हतं वहुतावतकं मत (३) तता पच्छा अधुना लधेसु
कलिंगेसु तीवो धंमवायो · सयो देवानंप्रियस वज
वधो व मरणं व अपवाहो वं जनस त वाढं वेदनमत च गुरुमत च
देवानंपि स · वाम्हणा व समणा व अने ·· ··सा
मानि मितरि सुसुंसा गुरुसुसुंसा मितसंस्तवसहायञातिकेसु दासभ
· ˜ अभिरतानं व विनिक्रमण (८) येसं वा प
हायञातिका व्यसनं प्रापुणवि तत सो पि तेस उप-
घातो होति (६) पटीभागो चेसा सव स्ति इमे निकाया
अञत्र योनेसु··············म्हि यत्र नास्ति मोनुसानं एकतरम्हि
पासंडम्हि न नाम प्रसादो (११) यावतको जनो तदा··· ··· ···
स्रभागो व गरुमतो देवानं ··········न य सक छमितवे (१३) या
च पि अटवियो देवानंपियस पिजिते पाति ········ · ·· चते तेसं
देवानंपियस········ ···सवभूतानां अछति च सयमं च समचैरं
च भादव च········ लधो · ·····;नप्रियस इध सवेसु च ···· ···
योनराज परं च तेन चत्पारो राजानो तुरमायो च अंतेकिन च
मगा च · · ·· इध राजविसयम्हि योनकंबो ········ अंपा-
रिंदेसु सवत देवानंपियस धंमानुसस्टिं अनुवतरे (१६) यत पि दूति
······ ·;···नं धमानुसस्टिं च धमं अनुविधियरे · विजयो
सवथा पुन विजयो पीतिरसो सा (२१) लधा सा पीती होति धंम-
वीजयम्हि ···प्रियो (२४) एताय अथाय अयं धंमल · ···:···
वं विजयं मा विजेतव्यं मंञा सरसके एव विजये छाति च ··· ··
······ ·······किको च पारलोकिको·· ······· · ···इलोकिका च
पारलोकिका च।

प्रज्ञापन १४

(१) श्रयं धंमलिपी देवानंप्रियेन प्रियदसिना राञा लेखापिता श्रस्ति एव संखितेन अस्ति मभमेन अस्ति विस्ततन (२) न च सर्वं सर्वत घटितं (३) महालके हि विजितं बहु च लिखितं लिखापयिसं चेव (४) अस्ति च एत कं पुन पुन वुतं तस तस श्रथस माधूरताय किंति जनो तथा पटिपजेय (५) तत्र एकदा श्रसमातं लिखितं श्रस देसं व सछाय कारणं व श्रलोचेत्पा लिपिकरापरधेन व।

.. . . तेप .. . . पिपा ..

यस्वेतो हस्ति सर्वलोकसुखाहरो नाम।

कालसी

प्रज्ञापन १

(१) इयं धंमलिपि देवानंपियेना पियदसिना लेखिता (२) हिदा नो किछी जिवे आलभितु पजोहितविये (३) नो पि चा समाजे कटविये (४) वहुका हि दोसा समाजसा देवानंपिये पियदसी लाजा दखति (५) अथि पि चा एकतिया समाजा साधुमता देवानपियसा पियदसिसा लाजिने (६) पुले महानससि देवानंपियसा पियदसिसा लाजिने अनुदिवसं वहुनि पानसहसानि अलंभियिसु सुपठाये (७) से इदानि यदा इयं धंमलिपि लेखिता तदा तिंनि येवा पानानि अलभियंति दुवे मजूला एके मिगे से पि चू मिगे नो धुवो (८) एतानि पि चु तिनि पानानि नो अलाभियिसति।

प्रज्ञापन २

(१) सवता विजितसि देवानंपियसा पियदसिसा लाजिने ये च अंता अथा चोडा पंडिया सातियपुतो केललपुतो तंवपनि अंतियोगे नाम योनलाजा ये चा अंने तसा अतियोगसा सामंता लाजानो सवता देवानपियसा पियदसिसा लाजिने दुवे

चिकिसका कटा मनुसचिकिसा चा पसुचिकिसा चा (२) ओस-घीनि मनुसोपगानि चा पसोपगानि चा अतता नथि सवता हाला-पिता चा लोपापिता चा (३) एवमेवा मुलानि चा फलानि चा अवता नथि सवता हालापिता चा लोपापिता चा (४) मगेसु लुखानि लोपितानि उदुपानानि चा खानापितानि पटिभोगाये पसुमुनिसान।

प्रज्ञापन ३

(१) देवानपिये पियदसि लाजा हेवं आहा (२) दुवाडसव-साभिसितेन मे इयं आनपयिते (३) सविता विजितसि मम युता लजूके पादेसिके पंचसु पंचसु वसेसु अनुसंयानं निखमंतु एताये वा अठाये इमाय धंमनुसथिया यथा अनाये पि कमाये (४) साधु मातपितिसु सुसुसा मितसंथुतनातिक्यानं चा बंभनसमनानं चा साधु दाने पानानं अनालंभे साधु अपवियाता अपभंडता साधु (५) पलिसा पि च युतानि गननसि-अनपयिसति हेतुवता चा वियंजनते चा।

प्रज्ञापन ४

(१) अतिकंतं अंतलं बहुनि वमसतानि वधिते वा पाना-लंभे विहिसा चा भुतानं नातिया असंपटिपति समनबंभनानं असं-पटिपति (२) से अजा देवानपियसा पियदसिने लाजिने धंमचलनेना भेलिघोसे अहो धमघोसे विमनदसना हथिनि अगिकंधानि अंनानि

चा दिव्यानि लुयानि दसयितु जनस (३) श्रादिसा बहुहि वससते- हि ना हुतपुलुवे तादिसे अजा वढिते देवानंपियसा पियदसिने लाजिने धंमनुसथिये श्रनालंभे पान.नं श्रविहिसा भुतानं नातिनं संपटिपति वंभनसमनानं संपटिपति मातापितिसु सुसुसा (४) एसे चा श्रंने चा बहुविधे धंमचलने वधिते (५) वधियिसति चेवा देवानंपिये पियदसि लाज इमं धंमचलनं (६) पुता च कं नताले चा पनातिक्या चा देवानंपियसा पियदसिने लाजिने पवढ- यिसंति चेव धंमचलनं इमं श्रावकपं धंमसि सीलसि चा चिठितु धंमं श्रनुसासिसंति (७) एसे हि सेठे कंमं श्रं धंमानुसासनं (८) धंम- पलने पि चा नो होति श्रसिलसा (९) से इमसा अथसा वधि श्रहिनि चा साधु (१०) एताये श्रथाये इयं लिखिते इमसा श्रथसा वधि युजंतु हिनि च मा श्रलोचयिसु (११) दुवाडसवशाभिसितेना देवानंपियेना पियदशिना लाजिना लेखिता।

प्रज्ञापन ५

(१) देवानंपिये पियदसि लाजा श्रहा (२) कया दुकले। (३) ए श्रादिकले कयानसा से दुकलं कलेति (४) से ममया बहुकयाने कटे (५) ता भमा पुता चा नताले चा पलं चा तेहि ये श्रपतिये मे श्रावकपं तथा श्रनुवटिसंति से सुकटं कछंति (६) ए चु हेता देसं पि हापयिसति से दुकटं कछति (७) पापे हि नामा सुपदालये (८) से श्रतिकंतं श्रंतलं नो हुतपुलुव धंममहामता नामा(९) तेदसवसाभिसितेना ममया धंममहामाता कटा (१०) ते सवपासंडेसु

चिकिसका कटा मनुसचिकिसा चा पसुचिकिसा चा (२) ओस-धीनि मनुसोपगानि चा पसोपगानि चा अतता नथि सवता हाला-पिता चा लोपापिता चा (३) एवमेवा मुलानि चा फलानि चा अतता नथि सवता हालापिता चा लोपापिता चा (४) मगेसु लुखानि लोपितानि उदुपानानि चा खानापितानि पटिभोगाये पसुमुनिसानं।

प्रज्ञापन ३

(१) देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा (२) दुवाडसव-साभिसितेन मे इयं आनपयिते (३) सविता विजितसि मम युता लजूके पादेसिके पंचसु पंचसु वसेसु अनुसंयानं निखमंतु एताये वा अठाये इमाय धंमनुसथिया यथा अंनाये पि कंमाये (४) साधु मातपितिसु सुसुसा मितसंथुतनातिक्यानं चा बंभनसमनानं चा साधु दाने पानानं अनालंभे साधु अपवियाता अपभंडता साधु (५) पलिसा पि च युतानि गननसि-अनपयिसंति हेतुवता चा वियंजनते चा।

प्रज्ञापन ४

(१) अतिकंतं अंतलं बहुनि वससतानि वधिते वा पाना-लंभे विहिसा चा भुतानं नातिषु असंपटिपति समनबंभनानं असं-पटिपति (२) से अजा देवानंपियसा पियदसिने लाजिने धंमचलनेना भेलिघोसे अहो धंमघोसे विमनदसना हथिनि अगिकंधानि अंनानि

चा दिव्यानि लुपानि दसयितु जनस (३) आदिसा वहुहि वससतेहि ना हुतपुलुवे तादिसे अजा वढिते देवानंपियसा पियदसिने लाजिने धंमनुसथिये अनालंभे पानानं अविहिसा भुतानं नातिनं संपटिपति बंभनसमनानं संपटिपति मातापितिसु सुसुसा (४) एसे चा अंने चा वहुविधे धंमचलने वधिते (५) वधियिसति चेवा देवानंपिये पियदसि लाज इमं धंमचलनं (६) पुता च कं नताले चा पनातिक्या चा देवानंपियसा पियदसिने लाजिने पवढयिसंति चेव धंमचलनं इमं आवकपं धंमसि सीलसि चा चिठितु धंमं अनुसासिसंति (७) एसे हि सेठे कंमं अं धंमानुसासनं (८) धंमचलने पि चा नो होति असिलसा (९) से इमसा अथसा वधि अहिनि चा साधु (१०) एताये अथाये इयं लिखिते इमसा अथसा वधि युजंतु हिनि च मा अलोचयिसु (११) दुवाडसवशाभिसितेना देवानंपियेना पियदशिना लाजिना लेखिता।

प्रज्ञापन ५

(१) देवानंपिये पियदसि लाजा अहा (२) कया दुकले। (३) ए आदिकले कयानसा से दुकलं कलेति (४) से ममया वहुकयाने कटे (५) ता ममा पुता चा नताले चा पलं चा तेहि ये अपतिये मे आवकपं तथा अनुवटिसति से सुकटं कछंति (६) ए चु हेता देसं पि हापयिसति से दुकटं कछति (७) पापे हि नामा सुपदालये (८) से अतिकंतं अंतलं नो हुतपुलुव धंममहामता नामा(९) तेदसवसाभिसितेना ममया धंममहामाता कटा (१०) ते सवपासडेसु

वियापटा धंमाधियानाये चा धंमयठिया हिदसुखाये या धमयुतमा योनकम्बोजगंधालानं ए या पि अंने अपलंता (११) भटमयेसु बंभनिभेसु अनथेसु बुधेसु हिदसुखाये धंमयुताये अपलियोधाये वियपटा से (१२) बंधनबधसा पटिविधानाये अपलियोधाये मोखाये चा एयं अनुबधा पजाव ति वा कटाभिकाले ति वा महालके ति वा वियापटा ते (१३) हिदा बाहिलेसु चा नगलेसु सवेसु ओलोधनेसु भातिनं च ने भगिनिना ए या पि अंने नातिक्ये सवता वियापटा (१४) ए इयं धंमनिसिते ति वा दानसंयुते ति वा सवता विजितसि ममा धंमयुतसि वियापटा ते धंममहामता (१५) एताये अठाये इयं धंमलिपि लेखिता चिलठितिक्या होतु तथा च मे पजा अनुवततु।

•

प्रज्ञापन ६

(६) देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा (२) अतिकंतं अंतलं नो हुतपुलुवे सवं कलं अठकंमे वा पटिवेदना वा (३) से ममया हेवं कटे (४) सवं कालं अदमानसा मे ओलोधनसि गभागालसि वचसि विनितसि उयानसि सवता पटिवेदका अठं जनसा ……… वेदेतु मे (५) सवता चा जनसा अठं कछामि हकं (६) यं पि चा किछि मुखते आनपयामि हकं दापकं वा सावकं वा ये वा पुना महामतेहि अतियायिके आलोपिते होति तायेठाये विवादे निझति वा संतं पालिसाये अनंतलियेना पटि … …वियो मे सवता सवं कालं (७) हेवं आनपयिते

ममया (८) नथि हि मे दोसे उठानसा अठसंतिलनाये चा (६) कट-वियभुते हि मे सवलोकहिते (१०) तसा चा पुना एसे मुले उठाने अठसंतिलना चा (११) नथि हि कंमतला सवलोकहितेना (१२) यं च किछि पलकमामि हकं किंति भुतानं अननियं येहं हिद च कानि सुखायामि पलत चा स्वगं आलाधियितु (१३) से ऐतायेठाये इयं धमलिपि लेखिता चिलठितिक्या होतु तथा च मे पुतदाले पलकमातु सवलोकहिताये (१४) दुकले चु इयं अनता अगेना पलक मेना ।

प्रज्ञापन ७

देवानंपिये पियदसि लाजा सवता इछति सवपासंड वसेवु (२) सवे हि ते सयमं भावसुधि चा इछंति (३) जने चु उचावुचा-छंदे उचावुचलागे (४) ते सवं एकदेसं पि कछन्ति (५) विपुले पि चु दाने असा नथि सयमे भावसुधि किटनाता दिढभतिता चा निचे वाढं ।

प्रज्ञापन ८

(१) अतिकंतं अंतलं देवानंपिया विहालयातं नाम निख-मिसु (२) हिदा मिगविया अंनानि चा हेडिसानि अभिलामानि हुसु (३) देवानंपिये पियदसि लाजा दसवसाभिसिते सन्तं निखमिथा संबोधि (४) तेनता धंमयाता (५) हेता इयं होति समनबंभनानं

दसने या दाने च धुधानं दसने च हिलंनपटिविधाने या जानपदमा जनसा दसने धंमनुसथि चा धमपलिपुछा चा ततोपया (६) एमे मुये लाति होति देवानपियसा पियदसिसा लाजिने भागे अंने ।

प्रज्ञापन ६

देवानपिये पियदसि लाजा आहा (२) जने उचावुचं मंगलं कलेति आबाधसि अवाहसि विवाहसि पजोपादाने पवाससि एताये अनाये चा एदिसाये जने बहु मगलं कलेति (३) हेव चु अबकज- नियो बहु चा बहुविधं चा खुदा चा निलथिया चा मगलं कलति (४) से कटवि चेव खो मंगले (५) अपफले चु खो एसे (६) इयं चु खो महाफले ये धममगले (७) हेता इयं दासभटकसि सम्या- पटिपति गुलुना अपचिति पानानं संयमे समनबंभनानं दाने एसे अंने चा हेडिसे । धंममगले नामा (८) से वतविये पितिना पि पुतेन पि भातिना पि सुवामिकेन पि मितसंथुतेना अव पटिवेसियेना पि इय साधु इयं कटविये मगले आव तसा अथसा निबुतिया इम वछामि ति (६) ए हि इतले मगले संसयिक्ये से (१०) सिया व व अठं निवटेया सिया पुना नो (११) हिदलोकिके चेव से (१२) इय पुना धममगले अकालिक्ये (१३) हचे पि तं अठ नो निटेति हिद अठं पलत अनत पुना पवसति (१४) हचे पुन तं अठ निवतेति हिदा ततो उमयेस लधे होति हिद चा से अठे पलत चा अनंतं पुना पसवति तेना धममगलेना ।

प्रज्ञापन १२

(१) देवानापिये पियद्सि लाजा पावापार्षडानि पवजितानि गहथानि वा पुजेति दानेन विविधये च। पुजाये (२) नो चु तथा दाने वा पुजा वा देवानंपिये मनति अथा कित शालावढि शियाति शवपाशडान (३) शालावढि ना बहुविधा (४) तश घु इनं मुले अ यचगुति किति ति अतपशड वा पुजा वा पलपाशंडगलहा व नो शया अपकलनशि लहका वा शिया तगि तशि पकलनशि (५) पुजेतविय चु पलपाशडा तेन तेन अकालन (६) हेव कलत अतपाशडा वढं वढिशति पलपाशड पि वा उपकलेति (७) तदा अनय कलत अतपाशड च छनति पलपाशड पि वा अपकनेति (८) ये हि केछ अतपाशड पुनाति पलपापड वा। गलहति। पवे अतपार्षड-भतिया वा किति। अतपापंड। दिपयेम पे च पुना तथा। कलतं। बाढतले। उपहंति। अतपापंडपि। (६) पमवाये बु पाघु किति। अंनमनपा धंमं। पुनेयु चा। पुपुपेयु चा ति। (१०) हेवं हि देवानंपियपा इछा किंति सवपापंड। वहपुता चा क्यानागा च। हुवेयु ति। (११) ए च तत तत। पपना। तेहि वतविये। (१२) देवानापिये नो तथा। दान वा। पुजा वा। मंनति। अथा किति पालावढि शिया। पवपापंडति। (१३) वहुका चा। एतायाठाये। वियापटा। धंममहामाता। इथिधियखमहामाता। वचभुमिक्या। अने वा निक्याया (१४) इय च एतिपा। फले। य अतपापंडवढि चा। होति धंमप ना दिपना।

प्रज्ञापन १३

(१) अठवषा- । मिषित- । या देवानंपियप पियदपिने । लाजिने । कलिग्या विजिता । (२) दियढमिते । पानपतपहशे । ये तफा अपवुढे । शतपहपमिते । तत हते । बहुतावतके । वा मटे (३) ततो पछा । अधुना लधप । कलिग्येषु । तिवे । धंमवाये धंमकामता । धंमानुपथि चा । देवानंपियपा । (४) पे अथि अनुपये । देवानपियपा । विजिनितु । कलिग्यानि । (५) अविजितं हि । विजिनमने । ए तता । वध या । मलने वा । अपवहे वा । जनपा । पे बाढ । वेदनियमुते । गुलुमुते चा । देवानपियपा (६) इय पि चु । ततो । गुलुमततले । देवानंपियपा (७) य तता वपवि बाभना व पम या अने वा पाशंड गिहिथा वा येशु विहिता एप अगमुति पुपुपा मातापितिपुपुषा गलुपुपा मितपंथतपहायनातिकेपु दाशभटकपि पम्यपटिपति दिढमतिता वेषं तता होति उपधाते या यधे वा अभिलतानं वा विनिखमने (८)येप वा पि युविहितानं पिनेहे अविपहिने ए तानं मितशधुतपहायनातिक्य वियपनं पापुनात तवा पे पि तानमेवा उपघाते होति (९) पटिभागे चा एप पवमनुपानं गुलुमते चा देवानपियपा (१०) नथि चा पे जनपदे यता नथि इमे निकाया आनता येनेपु वंह्मने चा पमने चा नथि चा कुरापि जनपदपि यता नथि मनुपान । एकतलपि पि । पापडपि । नो नाम पपादे । (११) पे अवलके जने । तदा कलिंगेषु । लवेपु हते चा मटे चा । अपवुढे चा । ततो पते भागे वा । पदुपभागे वा । अज गुलुमते वा । देवानपियपा ····· ·····नेयु (१५) इछ · ·
पवमु पयम पमचलिय मदव ति (१६) इय वु मु ···

देवानंपियेपा ये धंमविजये (१७) पे च पुना लधे देवानंपि········ च पयेपु च अतेपु अ पपु पि योजनपतेपु अत अतियोगे नाम योनला ·· पलं चा तेना अंतियोगेना चतालि ४ लजाने तुलमये नाम अंतेकिने नाम मका नाम अलिक्यपुदले नाम निचं चोड-पंडिया अवं तंवपंनिया हेवमेवा (१८) हेवमेवा हिदा लाजविश-वपि येनकंबोजेपु नाभकनाभपंतिपु भोजपितिनिक्येपु अधपालदेपु पवता देवानंपियपा धंमानुपथि अनुवतंति (१६) यत पि दुता देवानंपियसा नो यंति ते पि सुतु देवानंपिनंय धंमवुतं विधनं धंमानुसथि धंमं अनुविधियंअ अनुविधियिसंअ चा (२०) ये से लधे एतकेना होति सवता विजये पितिलसे से (२१) गधा सा होति पिति पिति धंमविजयपि (२२) लहुका हु रो सा पिति (२३) पालंतिक्यमेवे महफला मंनंति देवेनंपिने (२४) एताये चा अठाये इयं धंमलिपि लिखिता किति पुता पपोता मे असु नवं विजय म विजयतविय मनिपु पयकपि नो विजयपि खंति चा ल। हुदंडता चा लोचेतु तमेव चा विजयं मनतु ये धंमविजये (२५) पे हिदलो-किक्य पललोकिये (२६) पवा च क निलति होतु उयामलति (१७) पा हि हिदलोकिक पललोलिक्या।

प्रज्ञापन १४

(१) इयं धमलिपि देवानंपियेना पियदसिना लजिना लिखा-पिता अथि येवा सुखितेना अथि मझिमेना अथि विथटेना (२) नो हि सवता सवे घटिते (३) महालके हि विजिते बहु च

लिखिते लेखापेशामि चेव निस्यं (४) अथि चा हेता पुन पुना लपिते तप तपा अयपा मधुलियाये येन जने तथा पटिपजेया (५) ये पाया अत किछि असमति लिखिते दिपा वा धंसेये कालनं या अलोचयितु लिपिकलपलाधेन वा।

गजतमं

शहबाज़गढ़ी

प्रज्ञापन १

(१) अय ध्रमदिपि देवनप्रिअस रञो लिखपितु (२) हिद नो किचि जिवे अरभितु प्रयुहोतवे (३) नो पि च समज कटव (४) बहुक हि दोष समयसि देवणप्रिये प्रिअद्रशि रय दखति (५) अस्ति पि चु एकतिअ समये ससुमते देवनप्रिअस प्रिअ-द्रशिस रञो (६) पुर महनससि देवनप्रिअस प्रिअद्रशिस रञो अनुदिवसो बहुनि प्रणशतसहस्रनि अरभियिसु सुपठये (७) सो इदनि यद अय ध्रमदिपि लिखित तद त्रयो यो प्रण हंञंति मजुर दुवि २ म्रुगो १ सो पि म्रुगो नो ध्रुवं (८) एत पि प्रण त्रयो पच न अरभिशति

प्रज्ञापन २

(१) सम्रत्र विजिते देवनप्रियस प्रियद्रशिस ये च अंत यथ चोड पंडिय सतियपुत्रो केरडपुत्रो तंबपंणि अंतियोको नम योनरज ये च अंञे तस अतियोकस समंत रजनो सम्रत्र देवनं-

प्रियस प्रियद्रशिस रञो दुवि २ चिकिस क्रिट मनुशचिकिस''' ''
पशुचिकिस च (२) ओपढनि मनुशोपकनि च पशोपकनि च यत्र
यत्र नस्ति सवत्र हरपित च वुत च (३) कुप च खनपित प्रति-
भोगये पशुमनुशनं।

प्रज्ञापन ३

(१) देवनप्रियो प्रियद्रशि रज अहृति (२) वदयवषमि-
सितेन ' '''अणपित (३) सवत्र मश्र विजिते युत रजुको प्रदे-
शिक पंचपु पचपु ५ वषेपु अनुसंयन निक्रमतु एतिस वो करण
इमिस ध्रंमनुशस्तिये थ अत्रये पि क्रमये (४) सधु मतपितुपु
सुश्रुप मित्रसस्तुतत्रतिकनं व्रमणश्रमणन प्रणनं अनरंभो सधु
अपवयत अपभंडत सधु (५) परि पि युतनि गणनसि अणपेशति
हेतुतो च वंजनतो च।

प्रज्ञापन ४

(१) अतिक्रत अंतरं बहुनि वषशतनि वढितो वो प्रणरंभो
विहिस च भुतनं ञतिन असपटिपति श्रमणव्रमणन असपटिपति
(२) सो अज देवनप्रियस प्रियद्रशिस रञो ध्रमचरणेन भेरिघोष
अहो ध्रमघोष विमननं द्रशन अस्तिन जोतिकधानि अञनि च
दिवनि रुपनि द्रशयितु जनस (३) यदिश बहुहि वषशतेहि न भुत
भुवे तदिशे अज वढिते देवनप्रियस प्रियद्रशिस रञो ध्रमनुशस्तिय

ग्रनरंभो प्रणनं अविहिस भुतनं ञतिनं संपटिपति भ्रमणश्रमणन संपटिपति मतपितुषु वुढनं सुश्रुष (४) एत अञं च बहुविधं ध्रमचरणं वढितं (५) वढिशति च यो देवनंप्रियस प्रियद्रशिस रञो ध्रमचरणं इम (६) पुत्र पि च कं नतरो च प्रनतिक च देवनंप्रियस प्रियद्रशिस रञो प्रवढेशंति यो ध्रमचरणं इमं अवकप ध्रमे शिले च तिठिति ध्रमं अनुशशिशंति (७) एत हि स्रेठं क्रमं यं ध्रमनुशशनं (८) ध्रमचरणं पि च न भोति अशिलस (९) सो इमिस अथ्रस वढि अहिनि च सधु (१०) एतये अठये इमं निपिस्तं इमिस अठस वढि युजंतु हिनि च म लोचेषु (११) बदयवषभिसितेन देवनप्रियेन प्रियद्रशिन रञ अनं हिद निपेसितं।

प्रज्ञापन ५

(१) देवनप्रियो प्रियद्रशि रय एवं हहति (२) कलणं दुकरं (३) यो अदिकरो कलणस सो दुकरं करोति (४) सो मय बहु कलं किटं (५) तं मअ पुत्र च नतरो च परं च तेन ये मे अपच अशंति अवकपं तथ ये अनुवटिशंति ते सुकिटं कषंति (६) यो चु अतो कं पि हपेशदि सो दुकटं कपति (७) पपं हि सुकरं (८) स अतिक्रतं अतर नो भुतप्रव ध्रममहमत्र नम (९) सो तोदशवषभिसितेन मय ध्रममहमत्र किट (१०) ते सव्रप्रषंडेषु वपट ध्रमधिथनये च ध्रमवढिय हिदसुखये च ध्रमयुतस योनकंबोयगंधरनं रठिकनं पितिनिकनं ये व पिं अपरत (११) भटमयेषु ब्रमणिभेषु अनथेषु वुढेषु हितसुखये ध्रंमयुतस अपलिगोध वपट ते (१२) बधनबधस

पटिविधनये अपलियोधये मोखये अयि अनुग्र प्रजव किटमिकरो व महलके व वियपट ते (१३) इच्र बहिरेषु च नगरेषु सवेषु ओरोधनेषु अतुन च मे स्पसन च ये व पि अंत्रे अतिक सवत्र वियपुट (१४) ये अय ध्रमनिरिते ति व ध्रमधियने ति व दनसयुते ति व सवत विजिते मत्र ध्रमयुतसि वियपट ते ध्रममहमत्र (१५) एतये अठये अयि ध्रमदिपि निपिस्त चिरथितिक भोतु तथ च मे प्रज अनुवततु।

प्रज्ञापन ६

(१) देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय एव अहति २) अतिक्रत अतर न भुतप्रुव सव कल अठक्रम व पटिवेदन व ३) त मय एव किट (४) सत्र कल अशमनस मे ओरोधनस्पि ध्रमगरस्पि व्रचस्पि विनितस्पि उयनस्पि सवत्र पटिवेदक अठ जनस पटिवेदेतु मे (५) सवत्र च जनस अठ करोमि (६) य पि च किंचि मुखतो अणप-यमि अह दपक व श्रवक व ये व पन महमत्रन अचयिक अरोपितं भोति तये अठये विवदे निझति व सतं परिषये अनतरियेन प्रटिवेदेतवो मे (५) सवत्र च अठ जनस करोमि अहं (६) य च किंचि मुखतो अणपेमि अह दपक व श्रवक व ये व पन महमत्रन अचयिकं अरोपित भोति तये अठये विवदे सत निझति व परिषये अनतरियेन पटिवेदेतवो मे सवत्र सव कल (७) एव अणपित मय (८) नस्ति हि मे तोषो उठनसि अठसतिरणये च (९) कटवमत हि मे सवलोकहित (१०) तस च मुल एत्र उथन अठसतिरण च

(११) नस्ति हि ग्रमतर सवलोकहितेन (१२) य च किंचि परक्रममि किति भुतनं अनरिाय व्रचेयं इग्र च प सुखयमि परत्र च स्पग्र अरधेतु (१३) एतये अठये अयि ध्रम निपिस्त चिरथितिक भोतु तय च मे पुत्र नतरो परग्रमंतु सवलोकहितये (१४) दुकर तु सो इमं अञत्र अग्रे परक्रमेन ।

मज्ञापन ७

(१) देवनप्रियो प्रियशि रज सवत्र इछति सव्रप्रषड वसेयु (२) सवे हि ते सयमे भवशुधि च इछति (३) जनो चु उचवुचछदो उचवुचरगो (४) ते सब्रं व एकदेश व पि कषति (५) विपुले पि चु दने यस नस्ति सयम भवशुधि किट्रञत द्रिढभतित निचे पढं ।

प्रज्ञापन ८

(१) अतिक्रत अतरं देवनप्रिय विहरयत्र नम निक्रमिषु (२) अत्र म्रुग अञनि च एदिशनि अभिरमनि अभुवसु (३) सो देवनप्रियो प्रियद्रशि रज दशवषभिसितो सत निक्रमि सबोधि (४) तेनद ध्रंमयत्र (५) अत्र इय होति श्रमणब्रमणन द्रशने दन बुढनं द्रशन हिरञप्रटिविधने च जनपदस जनस द्रशन ध्रमनुशस्ति ध्रमपरिपुछ च ततोपय (६) एषे भुये रति भोति देवनप्रियस प्रियद्रशिस रञो भगो अञि ।

प्रज्ञापन ६

(१) देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय एवं अहति (२) जनो उचवुचं मंगलं करोति श्रवधे अवहे विवहे पजुपदने प्रवसे अवये अवये च मदिरिये जनो व मंगलं करोति (३) अत्र तु स्त्रियक वहु च वहुविधं च पुतिक च, निरठियं च मंगलं करोति (४) सो कटवो च व खो मंगल (५) अपफलं तु खो एत (६) इमं तु खो महफल ये ममंगल (७) अत्र इम दसमटकस सपटिपति गरुन अपचिति प्रणनं संयमो शमणव्रमणन दन एतं अमं च ध्रममंगलं नम (८) सो वतवो पितुन पि पुत्रेन पि भ्रतन पि स्पामिकेन पि मित्रसंस्तुवेन अव प्रतिवेशियेन इमं सधु इमं कटवो मंगलं यव तस अठूस निवुटिय निवुटसि व पुन इम कपं (९) ये हि एतके मगले सशयिके तं (१०) सिय वो तं अठं निवटेयति सिय पुन नो (११) इअलोक च वो तं (१२) इद पुन ध्रममगलं अकलिकं (१३) यदि पुन तं अठं न निवटे इअ अथ परत्र अनंतं पुनं प्रसवति (१४) हंचे पुन तं ठं निवटेति ततो उभयेस लधं भोति इअ च सो अठो परत्र च अनंतं पुनं प्रसवति तेन ध्रमंगलेन।

प्रज्ञापन १०

(१) देवनप्रिये प्रियद्रशि रय यशो व किट्रि व नो महठवह मवति अनत्र यो पि यशो किट्रि व इछति तदत्वये अयतिय च जने ध्रमसुश्रप सुश्रुपतु मे ति ध्रमवुतं च अनुविधियतु एतकये देवनप्रिये प्रियद्रशि रय यशो किट्रि व इछति (२) यं तु

किचि परक्रमति देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय तं सम्रं परत्रिकये व किति सकले अपरिस्रवे सियति (४) एषे तु परिस्रवे यं अपुनं (५) दुकरे तु खो एषे खुद्रकेन वग्रेन उसटेन व अवत्र अग्रेन परक्रमेन सवं पारतिजितु (६) अत्र चु उसटे

प्रज्ञापन ११

(१) देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय एव हहति (२) नस्ति एदिश दनं यदिशं ध्रमदन ध्रमसस्तवे ध्रमसंविभगो ध्रमसंबंध (३) तत्र एतं दसभटकनं सम्मपटिपति मतपितुषु सुश्रुष मित्रसंस्तुत-ञतिकन श्रमणब्रमणन दन प्रणन अनरभो (४) एत वतवो पितुन पि पुत्रेन पि भ्रतुन पि स्पमिकेन पि मित्रसस्तुतन अव प्रतिवेशियेन इमं सधु इमं कटवो (५) सो तथ करत इअलोक च अरधेति परत्र च अनत पुञ प्रसवति तेन ध्रमदनेन ।

प्रज्ञापन १२

(१) देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय सम्रप्रषडनि प्रव्रजितनि ग्रहथनि च पुजेति दनेन विविधये च पुजये (२) नो चु तथ दन व पुज व देवनंप्रियो मञति यथ किंति सलवढि सिय सव्रप्रषंडनं (३) सलवढि तु बहुविध (४) तस तु इयो मुल यं वचगुति किंति अतप्रषडपुज व परपषडगरन व नो सिय अपकरणसि लहुक व सिय तसि तसि प्रकरणे (५) पुजेतविय व चु परप्रषंड तेन तेन

अकरेन (६) एवं करतं अतप्रपडं वढेति परप्रपंडंस पि च उपकरोति (७) तद अञथ करमिनो अतप्रपड क्षणति परप्रपडस च अपकरोति (८) यो हि कचि अतप्रपडं पुजेति परप्रपडं गरहति सबे अतप्रपडभतिय व किति अतप्रपंडं दिपयमि ति सो च पुन तथ करतं सो च पुन तथ करतं बढतरं उपहंति अतप्रपडं (६) सो सयमो वो सधु किति अञमञस भ्रमो श्रुणेयु च सुश्रुषेयु च ति (१०) एवं हि देवनंप्रियस इछ किति सब्रप्रपंड बहुश्रुत च कलणगम च सियसु (११) ये च तत्र तत्र प्रसन तेष वतवो (१२) देवनंप्रियो न तथ दनं व पुज व मञति यथ किति सलवढि सियति सब्रपपडनं (१३) बहुक च एतये अठ ..... वपट ध्रममहमत्र इस्त्रिधियक्षमहमत्र व्रचभुमिक अञे च निकये (१४) इमं च एतिस फलं य अतपपडवढि भोति ध्रमस च दिपन।

प्रज्ञापन १३

(१) अठवपअभिसितस देवनप्रिअस प्रिअद्रशिस रञो कलिग विजित (२) दिअढमत्रे प्रणशतसहस्रे ये ततो अपवुढे शतसहस्रमत्रे तत्र हते बहुतवतके व मुटे (३) ततो पच अधुन लधेषु कलिंगेषु तिव्रे ध्रमशिलन ध्रमकमत ध्रमनुशस्ति च देवनप्रियस (४) सो अस्ति अनुसोचन देवनप्रिअस विजिनिति कलिगनि (५) अविजितं हि विजिनमनो यो तत्र वध व मरणं व अपवहो व जनस तं बढं वेदनियमत गुरुमतं च देवनप्रियस (६) इदं पि चु ततो गुरुमततर देवनप्रियस (७) ये तत्र वसति ब्रमण व

श्रमण च श्रंने च प्रपंड प्रहथ च येसु विहित एव श्रम.........
मतपितुपु सुश्रुप गुरुन सुश्रुप मित्रसंस्तुतसहयनतिकेपु दसभटकनं
सम्मप्रतिपति द्रिढभतित तेप तत्र भोति श्रपप्रथो च वधो व श्रभि-
रतन व निक्रमणं (८) येप च पि सुविहितनं सिहो श्रविप्रहिनो
ए तेप मित्रसंस्तुतसहयनतिक वसन प्रपुणति तत्र तं पि तेप घो
श्रपग्रथो भोति (६) प्रतिभगं च एतं सम्रमनुशनं गुरुमतं च देवनं-
प्रियस (१०) नस्ति च एकतरे पि प्रपडस्पि न नम प्रसदो (११)
सो यमत्रो जनो तद कलिंगे हतो च मुटो च अपवुढ च ततो शत-
भगे व सहस्रभगं व श्रज गुरुमतं वो देवनंप्रियस (१२) यो पि
च श्रपकरेयति छमितवियमते व देवनंप्रियस यं शको छमनये
(१३) य पि च श्रटवि देवनंप्रियस विजिते भोति त पि श्रनुनेति
श्रनुनिजपेति (१४) श्रनुतपे पि च प्रभवे देवनंप्रियस वुचति तेप
किति श्रवत्रपेयु न च हंब्येयसु (१५) इछति हि देवनंप्रियो सव-
भुतन श्रचति संयमं समचरियं रभसिये (१६) श्रयि च मुखमुत
विजये देवनंप्रियस यो ध्रमविजयो (१७) सो च पुन लधो देवनं-
प्रियस इह च सवेपु च श्रंतेपु श्र षपु पि योजनशतेपु यत्र श्रंतियो-
को नम योनरज परं च तेन श्रतियोकेन चतुरे ४ रजनि तुरमये
नम श्रंतिकिनि नम मक नम श्रलिकसुदरो नम निच चोडपंड श्रव
तंबपंणिय (१८) एवमेव हिद रजविषवस्पि योनकंबोयेपु नभकन-
भितिन भोजपितिनिकेपु श्रंध्रपलिदेपु सवत्र देवनंप्रियस ध्रमनुशस्ति
श्रनुवटंति (१६) यत्र पि देवनंप्रियस दुत न मचंति ते पि श्रुतु
देवनंप्रियस ध्रमवुटं विधनं ध्रमनुशस्ति ध्रमं श्रनुविधियंति
श्रनुविधियिशंति च (२०) यो स लधे एतकेन भोति सवत्र

विजयो सवत्र पुन विजयो प्रितिरसो मो (२१) लध भोति प्रिति भ्रमविजयस्पि (२२) लहुक तु खो म प्रिति (२३) परत्रिकमेव महफल मेनति देवनप्रियो (२४) एतये च अठये अयि भ्रमदिपि निपिस्त किति पुत्र पपोत्र मे असु नव विजय म विजेतविअ मन्पिु स्पकस्पि यो विजये क्षति च लहुदंडत च रोचेतु त च यो विज मञ्नतु यो भ्रमविजयो (२५) सो हिदलोकिको परलोकिको (२६) सवचतिरति भोतु य भ्रमरति (२७) स हि हिदलोकिक परलोकिक ।

प्रज्ञापन १४

(१) अयि भ्रमदिपि देवनंप्रियेन प्रिशिन रञ निपेसपित अस्ति वो संक्षितेन अस्ति यो विस्त्रिटेन (२) न हि सवत्र ससत्रे गटिते (३) महलके हि विजिते बहु च लिखिते लिखपेशमि चेव (४) अस्ति चु अत्र पुन लपित तस तस अठस मधुरियये येन जन तथ पटिपजेयति (५) सो सिय व अत्र किचे असमत लिखित देश व सखय करण व अलोचेति दिपिकरम व अपरधेन ।

मनसेरा

प्रज्ञापन १

(१) श्रयि ध्रमदिपि देवनंप्रियेन प्रियद्रशिन रजिन लिखपित्त (२) हिद नो किछि जिवे अरभितु प्रजोहितविये (३) नो पि च समजे कटविये (४) बहुक हि दोष समजस देवनंप्रिये प्रियद्रशि रज दखति (५) अस्ति पि चु एकतिय समज सघुमत देवनप्रियस प्रियद्रशिस रजिने (६) पुर महनससि देवनप्रियस प्रियद्रशिस रजिने अनुदिवस बहुनि प्रणशतसहस्रनि अरभिसु सुपथये (७) से········ द अयि ध्रमदिपि लिखित तद तिनि येव प्रणनि अरभियंति दुवे २ मजुर एके म्रिगे से पि चु म्रिगे नो ध्र वं (८) एतनि पि चु तिनि प्रणनि पच नो अरभि······ ।

प्रज्ञापन २

(१) सवत्र विजितसि देवनप्रियस प्रियद्रशिस रजिने ये च अत अथ चोड पंडिय सतियपुत्र केरलपुत्र तंबपणि अतियोगे नम योनरज ये च अ··· ···· स ····· · गस समत रजने सम्रत्र ········प्रियस प्रियद्रशिस रजिने दुवे २ चिकिस कट मनुश-चिकिस च पशुचिकिस च (२) ओषढनि मनु·· ·····कनि च

प ··   कनि च अत्र अत्र नस्ति सव्रत्र हरपित च रोपपित च (३) एवमेव मुलनि च फलनि च अत्र अत्र नस्ति सव्रत्र हरपित च रोपपित च (४) मगेषु रुछनि रोपपितनि   पितनि पटिभोगये पशुमुनिशन।

प्रज्ञापन ३

(१) देवनप्रिये प्रियद्रशि रज एव अह (२) दुवडशवपभिसेतेन मे इय अणपयिते (३) सव्रत्र विजितसि   त रजु ·· प्रदेशिके पचपु पचपु ५ वपेषु अनुसयन निक्रमतु एतये व अथ्रये इमये ध्रमनुशस्तिये यथ अञ्ञये पि क्रमणे (४) सधु मतपितुषु सुश्रुष मित्रसस्तुतञतिकन च ब्रमणश्रमणन सधु दने प्रणन अनरभे सधु अपवयत अपभडत सधु (५) परिष पि च युतनि गणनसि अणपयिशति हेतुते च वियजनते च।

प्रज्ञापन ४

(१) अतिक्रत अतर बहुनि वपशतनि वधिते वो प्रणरभे विहिस च भुतन ञतिन असपटिपति श्रमणब्रमणन असपटिपति (२) से अज देवनप्रियस प्रियद्रशिने रञिने ध्रमचरणेन भेरिघोषे अहो धमघोषे विमनद्रशन अस्तिने अगिकधनि अञनि च दिवनि रुपनि द्रशेति जनस (३) अदिशे बहुहि वपशतेहि न हुतप्रुवे तदिशे अज वढिते देवनप्रियस प्रियद्रशिने रञिने ध्रमनुशस्तिय अनरभे

भ्रणन अविहिस भुतन ञतिन संपटिपति ब्रमणश्रमणन संपटिपति मतपितुषु सुश्रु प वुध्रन सुश्रु प (४) एषे अञे च बहुविधे ध्रमचरणे वध्रिते (५) वध्रयिशति येव देवनप्रिये प्रियद्रशि रज धमचरण इमं (६) पुत्र पि च क नतरे च पणतिक देवनप्रियस प्रियद्रशिने रजिने पवद्रयिशंति यो ध्रमचरण इमं अवकपं ध्रमे शिले च चिठितु ध्रमं अनुशाशिशंति (७) एषे हि स्रेठे ऋं ध्रमनुशशन (८) ध्रमचरणे पि च न होति अशिलस (९) से इमस अथ्रस वध्रि अहिनि च सधु (१०) एतये अथ्रये इयं लिखिते एतस अथ्रस वध्र युजंतु हिनि च म अलोचयिसु (११) दुवदशवषभिमितेन देवनप्रियेन प्रियद्रशिन रजिन इयं लिखपिते ।

प्रज्ञापन ५

(१) देवनंप्रियेन प्रियद्रशि रज एवं अह (२) कलणं दुकरं (३) ये अदिकरे कयणस से दुकरं करोति (४) तं मय बहु कयणे कटे (५) तं मअ पुत्र च नतरे च पर च तेन ये अपतिये मे अवकपं तथ अनुवटिशति से सुकट कषति (६) ये चु अत्र देश पि हपेशति से दुक्ट कषति (७) पपे हि नम सुपदरवे (८) से अतिकतं अंतरं न भुतपुव ध्रममहमत्र नम (९) से त्रेडशवषभिसितेन मय ध्रममहमत्र कट (१०) सत्रपषंडेष वपुट ध्रमधियनये च ध्रमवध्रिय हिदसुखये च ध्रमयुतस योनकंबोजगधरन रठिकपितिनिकन ये व पि अवे अपरत (११) भटमयेषु ब्रमणिभ्येषु अनथेषु वुध्रेषु हिदसुखये ध्रमयुतअपलिबोधये वियपुट ते (१२)

बधनबधस पटिविधनये अपलिबोधये मोदये च इयं अनुबध प्रज ति व कट्रभिकर ति व महलके ति व वियप्रट ते (१३) हिद बहिरेषु च नगरेषु सब्रेषु ओरोधनेषु भतन च स्पसुन च ये व पि अञे नतिके सब्रत्र वियपट (१४) ए इयं ध्रमनिशितो तो व ध्रमधिथने ति व दनसंयुते ति व सब्रत्र विजितसि मश्र ध्रमयुतसि वपुट ते ध्रममहमत्र (१५) एतये अथूये अयि ध्रमदिपि लिखित चिरठितिक होतु तथ च मे प्रज अनुवटतु।

प्रज्ञापन ६

(१) देवनप्रिये प्रियद्रशि रज एवं अह (२) अतिक्रतं अतरं न हुतपुवे सब्र कल अथ्रक्रम व पटिवेदन व (३) त मय एव किटं (४ सब्र कलं अशतस मे ओरोधने ध्रमगरसि व्रचस्पि विनितस्पि उयनस्पि सब्रत्र पटिवेदक अथ्र जनस पटिवेदेतु मे (५) सब्रत्र च जनस अथ्र करोमि अहं (६) य पि च किछि मुखतो अणपेमि अहं दपकं व श्रवकं व ये व पुन महमत्रेहि अचयिके अरोपिते होति तये अथ्रये विवदे निज़ति व सत परिषये अनतलियेन पटिवेदेतवियो मे सब्रत्र सब्र कल (७) एवं अणपित मय (८) नस्ति हि मे तोषे उठनसि अथसतिरणये च ६) कटवियमते हि मे सवलोकहिते (१०) तस चु पुन एषे मुले उठने अथ्रसतिरण च (११) नस्ति हि ध्रमतर सब्रलोकहितेन (१२) यं च किछि परक्रममि अहं किति भुतनं अणणिय येहं इअ च ये सुखयमि परत्र च स्पग्र अरधेतु ति (१३) से एतये अथूये इय ध्रमदिपि

लिखित चिरठितिक होतु तथ च मे पुत्र नतरे परक्रमतु सम्र-लोकहितये (१४) दुकरे च खो अ्रवत्र अ्रमेन परक्रमेन।

प्रज्ञापन ७

(१) देवनप्रियो प्रियद्रशि रज सवत्र इछति सम्रपषड वसेयु (२) सम्रे हि ते सयम भवशुधि च इछंति (३) जने चु उचवुचछदे उचवुचरगे (४) ते सम्रं एकदेशं व पि कषति (५) विपुले पि चु दने यस नस्ति सयेमे भवशुधि किटनत द्रिढभतित च निचे बढं।

प्रज्ञापन ८

(१) अतिक्रतं अतरं देवनप्रिय विहरयत्र नम निक्रमिषु (२) इअ म्रिगविय अञनि च एदिशानि अभिरमनि हुसु (३) से देवनप्रिये प्रियद्रशि रज दशवषभिसितो संतं निक्रमि सबोधि (४) तेनद ध्रमयत्र (५) अत्र इयं होति श्रमणब्रमणन द्रशने दने च वुध्रन द्रशने च हिरणपटिविधने च जनपदस जनस द्रशने ध्रमनुशस्ति च ध्रमपरिपुछ च ततोपय (६) एषे भुये रति होति देवनप्रियस प्रियद्रशिस रजिने भग अञें।

प्रज्ञापन ९

(१) देवनप्रिये प्रियद्रशि रज एवं अह (२) जने उचवुचं

मगलं करोति अवधसि अवहसि विवहसि प्रजोपदये प्रवससि एतये अन्नये च एदिशये जने वहु मंगलं करोति (३) अत्र तु अवकजनिक बहु च बहुविध च खुद च निरथ्रिय च मगलं करोति (४) से कटविये चेव खो मगले (५) अपफले चु खो एपे (६) इयं चु खो महफले ये ध्रममगले (७) अत्र इयं दसभटकसि सम्यपटिपति गुरुन अपचिति प्रणन सयमे श्रमणब्रमणन दने एपे अञे च एदिशे ध्रममगले नम (८) से वतविये पितुन पि पुत्रेन पि भ्रतुन पि स्पमिकेन पि मित्रसंस्तुतेन अव पटिवेशियेन पि इयं सधु इयं कटविये मगले अव तस अथ्रस निवुटिय निवुटसि व पुन इम कषमि ति (६) ए हि इतरे मगले शशयिके से (१०) सिय व तं अथ्र निवटेय सिय पन नो (११) हिदलोकिके चेव से (१२) इयं पुन ध्रममगले अकलिके (१३) हचे पि तं अथ्र नो निवटेति हिद अथ परत्र अनत पुण प्रसवति (१४) हचे पुन तं अथ्र निवटेति हिद ततो उभयेसं अरधे होति हिद च से अथ्र परत्र च अनत पुणं प्रसवति तेन ध्रममगले न।

प्रज्ञापन १०

(१) देवनप्रिये प्रियद्रशि रज यशो व किटि व नो महथ्रवहं मनति अणत्र यं पि यशो व किटि व इछति तदत्वये अयतिय च जने ध्रमसुश्रुष सश्रुषतु मे ति ध्रमवुतं च अनुविधियतु ति (२) एतकये देवनप्रिये प्रियद्रशि रज यशो व किटि व इछति (३)··· – किछि परक्रमति देवनप्रिये प्रियद्रशि रज तं सत्र परत्रिकये व

किति सफ़ले अपपरिसवे सियति ति (४) एपे चु परिसवे ए अपुणे (५) दुकरे चु खो एपे खुद्रकेन व वग्रेन उसटेन व अनत्र अग्रेन परक्रमेन सव्रं परितिजितु (६) अत्र तु खो उसटेनेव दुकरे।

प्रज्ञापन ११

(१) देवनप्रिये प्रियद्रशि रज एवं अह (२) नस्ति एदिशो दने अदिशे ध्रमदने ध्रमसंथवे ध्रमसंविभग ध्रमसंबंधे (३) तत्र एपे दसभटकसि सम्यपटिपति मतपितुपु सुश्रुप मित्रसंस्तुतञतिकन श्रमणब्रमणन दने प्रणन अनरभे (४) एपे वतविये पितुन पि पुत्रेन पि भ्रतुन पि स्पमिकेन पि मित्रसंस्तुतेन अव पटिवेशियेन इयं सधु इयं कटविये (५) से तथ करतं हिदलोके च कं अरधे होति परत्र च अनंतं पुणं प्रसवति तेन ध्रमदनेन।

प्रज्ञापन १२

(१) देवनप्रिये प्रियद्रशि रज सव्रपपडनि प्रवजितनि गेहथनि च पुजेति दनेन विविधये च पुजये (२) नो चु तथ दन व पुज व देवनंप्रिये मञति अथ किति सलवढि सिय सव्रपपडन ति (३) सलनु ढि तु वहुविध (४) तस चु इयं मुले अं वचगुति किति अतप्रपडपुज व परपपडगरह व नो सिय अपकरणसि लहुक व सिय तसि तसि पकरणसि (५) पुजेतविय व चु परप्रपड तेन तेन अकरेन (६) एवं करतं अत्वपपड वढं वढयति परपपडस पि च

उपकरोति (७) तदंनय करतं अतपपड च छणति परपपडस पि च अपकरोति (८) ये हि केछि अत्पपपड पुजेति परपपड व गरहति सत्रे अत्वपपडभतिय व किति अत्वपपड दिपयम ति पुन तथ करतं वढतरं उपहंति अत्वपपड (६) से समवये धो सधु किति अणमणस ध्रमं श्रुणेयु च सुश्रुपेयु च ति (१०) एवं हि देवनप्रियस इछ किति सव्रपपड बहुश्रुत च कयणगम च हुवेयु ति (११) ए च तत्र तत्र प्रसन तेहि वतविये (१२) देवनप्रिये नो तय दनं व पुजं व मणति अथ किति सलवढि सिय सव्रपपडन (१३) वहुक च एतये अथ्रये वपुट ध्रमसहमत्र इस्त्रिजक्तमहमत्र व्रचभुमिक अवे च निकये (१४) इयं च एतिस फले यं अत्वपपड-वढि च भोति ध्रमस च दिपन।

प्रज्ञापन १३

(१) अठवपभिसितस देवनप्रियस प्रियद्रशिने रजिने कलिग विजित (२) दियढमत्रे प्रणशतस······ ········ मटे (३) ततो पच अधुन लधेपु कलिगेपु तिव्रेध्रमयये ···· · ··· ध्रमनुशस्ति च देवनप्रि·············· (४)··· मरणे व अपवहे व जनस से वढं वेदनियमतें गुरुमते च देवनप्रियस (६) इयं पि चु ततो··· ········ येसु विहित एप श्रमणुटिसुश्रुप मतपितुपु सुश्रुप गुरुसुश्रुप मित्रसंस्तु ········वधे व अभिरतनं व विनिक्रमणि (८) येपं व पि सुविहितनं सिनेहे अविपहिने ए तनं मित्रसं ·· ·· (९) ··· ·· ···· एप सव्रमनुशनं गुरुमते च देवनंप्रियस (१०)

नस्ति च से जनपदे यत्र नस्ति इमे निकय अत्रत्र योनेपु म्रमणे च श्रमणे ··········पि जनपदसि यत्र·········न नम प्रसदे (११) से यवतके जने तद कलिंगेपु हते च ·· · अपवुढे च ततो शतभगे व सहस्रभगे व अज गुरुमते व देवनप्रियस (१२) ·········पक······मितवि · ··· (१३) पि च अटवि देवनप्रियस विजितसि होति त पि अनुनयति अनुनिभपयति (१४) अनुतपे पि च प्रभवे देवनप्रियस वुचति तेप कि·· ··· (१५) ·······छ········वनप्रिय·······(१६)·······मुखमुते विजये देवनप्रियस ये ध्रमविजये (१७) से च पुन लधे देवनप्रियस हिद च सवेपु च अंतेपु अ षपु पि योजनशतेपु··· ······· तियोगे नम योनरज ······ ······ अंते·· नम मक नम अलिकसुदरे नम निच चोडपंडिय अ तंवपंणिय (१८) एवमेव हिद रजविषवसि योनकंबोजेपु नभकनभपंतिपु भोजपितिनिकेपु अधप··· ·· ·· (१६) यत्र पि दुत देवनप्रियस न यंति ते पि श्रुतु देवनप्रियस ध्रमवुत विधनं ध्रमनुशस्ति ध्रंमं अनुविधियंति अनुविधियिशंति च (२०) ये से लधे एतकेन होति सवत्र विजये ········ (२३) परत्रिकमेव महफल मणति देवनप्रिये (२४) एतये च अथ्रये इयं ध्रंमदिपि लिखित किति पुत्र प्रपोत्र मे असु नवं वि · ·तविथं मणिपु सय ··· (२५) ···हिदलोके परलोकिके (२६)··२५ सव च क निरति होतु य ध्रमरति (२७) स हि इअलोकिक परलोकिक ।

प्रज्ञापन १४

(१) इयं ध्रमदिपि देवनप्रियेन प्रिय ·· ·· · जिन लिखापित

.........लिखिते लिखापेशामि चेव नि...(४) अस्ति चु अत्र पुन पुन लपिते तस तस अथस मधुरियये येन जने तथ पटिपजेयति (५) से सिय अत्र किछि..........ति लिखित .. ..व संखय ... .।

धौली

प्रज्ञापन १

(१) ....सि पवतसि देवानंपिय . . नाँ लाजिना लिखा .. .. ..वि पवसि आलभितु पजोह .. .. (३) नो पि च समाजे... .. समाज ..द . (४) . पि चु ..... तिया समाजा साधुमता देव . . पियदसिने लाजिने (६) .... मह ....पिय .. .. नि पानसत ....आलभियिसु सूपठाये (७) से अज अदा इयं धंमलिपी लिखि तिं............ आलभिय..........तिंनि पानानि पछा नो आलंभियिसंति।

प्रज्ञापन २

• (१) सवत विजितसि देवानंपियस पियदसिने ल . . .. .. अथा... .... तियोके नाम योनलाजा ए वा पि तस अंतियोकस सामंता लाजाने सवत देवानंपियेन पियदसिना .. . सा च पसुचिकिसा च (२) .. . धानि आनि मुनिसोपगानि पसुओपगानि च अतत नथि सवत हालापिता च लोपापिता च (३) मूल ..

धत हालापिता च लोपापिता च (४) मगेसु उदुपानानि खानापितानि लुखानि च लोपापितानि पटिभोगाये ··· नं।

प्रज्ञापन ३

(१) देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा (२) दुवादसव-साभिसितेन मे इय आनापयि ···(३)·········त विजितसि मे युता लजुके · · पंचसु पंचसु वसेसु अनुसयानं निखमावू अथा अंनाये पि कंमने हेव इमाये धंमानुसथिये (४) साधु मातापितिसु सुसूसा म ··· नातिसु च धंभनसमनेहि साधु दाने जीवेसु अनालभे साधु अपवियता अपभंडता साधु (५) पलिसा पि च · ····· नसि युतानि आनपयिसति हेतुवे च वियंज··· ।

प्रज्ञापन ४

(१) अतिकंतं अंतलं बहूनि वससतानि वढिते व पानालभे विहिसा च भूतानं नातिसु असंपटिपति समनबाभनेसु असंपटिपति (२) से अज देवानंपियस पियदसिने लाजिने धंमचलनेन भेलिघोसं अहो धंम विमानदसनं हथीनि अगिकधानि अंनानि च दिवियानि लूपानि दसयितु मुनिसानं (३) आदिसे बहूहि वससतेहि नो हूतपुलुवे तादिसे अज वढिते देवानंपियस पियदसिने लाजिने धंमानुसथिया अनालभे पानानं अविहिसा भूतानं नातिसु संपटिपति समनबाभनेसु संपटिपति मातिपितुसुसूसा वुढसुसूसा

(४) एस अंने च यहुविधे धंमचलने वढिते (५) वढयिसति चेव देवानंपिये पियदसी लाजा धंमचलनं इमं (६) पुता पि चु नति पनति·· च देवानंपियस पियदसिने लाजिने पवढयिमंति येव धंमचलनं इमं आकपं धमसि सीलसि च चिठितु धंमं अनुसासि· सति (७) एस हि सेठे कंमे या धंमानुसासना (८) धंमचलने पि चु नो होति असीलस (९) से इमस अठस वढी अहोनि च साधू (१०) एताये अठाये इयं लिखिते इमस अठस वढी युजंतू हीनि च मा अलोचयिसू (११) दुवादस वसानि अभिसितस देवानंपियस पियदसिने लाजिने य इध लिखिते।

प्रज्ञापन ५

(१) देवानपिये पियदसी लाजा हेवं आहा (२) कयाने दुकले (३) ·· ·· कयानस से दुकलं कलेति (४) से मे बहुके कयाने कटे (५) तं ये मे पुता व नती व ·· ··· · च तेन ये अपतिये मे आवकपं तथा अनुवतिसंति से सुकटं कछति (६) ए हेत देस पि हापयिसति से दुकटं कछति (७) पापे हि नाम सुपदालये (८) से अतिकंतं अंतलं नो हूतपुलुवा धंममहामाता नाम (९) से तेदसवसाभिसितेन मे धममहामाता नाम कटा (१०) ते सवपासडेसु वियापटा धंमाधिथानाये धंमवढिये हितसुखाये च धंमयुतस योनकंबोचगंधालेसु लठिकपितेनिकेसु ए वा पि अने आपलता (११) भटिमयेसु बाभनिभियेसु अनाथेसु महालकेसु च हितसुखाये धंमयुताये अपलिबोधाये वियापटा से(१२) बंधनबधस पटिविधानाये अपलिबो·

धाये मोखाये च इयं अनुबंध पजा ति य फटाभीफाले ति य महालके ति व वियापटा से (१३) हिद च बाहिलेसु च नगलेसु सवेसु सवेसु ओलोधनेसु मे ए वा पि भातीनं मे भगिनीनं व अंनेसु वा नातिसु सवत वियापटा (१४) ए इयं धंमनिसिते ति व धंमाधियाने ति व दानसयुते व सवपुठवियं धंमयुतसि वियापटा इमे धंममहामाता (१५) इमाये अठाये इयं धंमलिपी लिखिता चिलठितीका होतु तथा च मे पजा अनुवततु ।

प्रज्ञापन ६

(१) देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा (२) अतिकंतं अंतलं नो हूतपुलुवे सवं कालं अठकंमे व पटिवेदना व (३) से ममया कटे (४) सवं कालं ·· ·· · मानस मे अते ओलोधनसि गभागालसि वचसि विनीतसि उयानसि च सवत पटिवेदका जनस अठं पटिवेदयंतु मे ति (५) सवत च जनस अठं कलामि हकं (६) अं पि च किछि मुखते आनपयामि दापकं वा सावकं वा ए वा महामातेहि अतियायिके आलोपिते होति तसि अठसि विवादे व निफती वा संतं पलिसाया आनंतलियं पटिवेदेतविये मे ति सवत सवं कालं (७) हेवं मे अनुसथे (८) नथि हि मे तोसे उठानसि अठसंतीलनाय च (९) कटवियमते हि मे सवलोकहिते (१०) तस च पन इयं मूले उठाने च अठसंतीलना च (११) नथि हि कंमत'''सवलोकहितेन (१२) अं च किछि पलकमामि हकं किंति भूतानं आननियं येहं ति हिद च कानि सुखयामि पलत च

स्वगं आलाधयंतू ति (१३) एताये अठाये इयं धंमलिपी लिखिता चिलठितीका होतु तथा च पुता पपोता मे पलकमंतू सवलोकहिताये (१४) दुकले चु इयं अंनत अगेन पलकमेन।

प्रज्ञापन ७

(१) देवानंपिये पियदसी लाजा सवत इछति सवपासडा वसेवू ति (२) सवे हि ते सयम भावसुधि च इछति (३) मुनिसा च उचावुचछंदा उचावुचलागा (४ ते सव या एकदेसं व कछंति (५) विपुले पि चा दाने अस नथि सयमे भावसुधी च नीचे बाढं।

प्रज्ञापन ८

(१) अतिकंत अंतलं लाजाने विहालयातं नाम निखमिसु (२) त मिगविया अंनानि चं एदिसानि अभिलामानि हुवति नं (३) से देवानंपिये पियदसी लाजा दसवसाभिसिते निखमि संबोधि (४) तेनता धंमयाता (५) ततेस होति समनबाभनानं दसने च दाने च वुढानं दसने च हिलंनपटिविधाने च जानपदस जनस दसने च धमानुसथी च······· पुछा च तदोपया (६) एसा भुये अभिलामे होति देवानंपियस पियदसिने लाजिने भागे अंने।

प्रज्ञापन ९

(१) देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा (२) अथि जने उचावुचं मगलं कलेति आबाध.........वीवाह.........जुपदाये पवाससि एताये अंनाये च हेदिसाये जने वहुकं मंगलं क......... (३).........चु इथी बहुकं च वहुविध च खुदं च निलठियं च मंगलं कलेति (४) से कटवियेचेव खो मंगले (५) अपफले चु खो एस हेदिसे मंग ..(६)...यं चु खो महाफले ए धंममंगले (७) ततेस दासभटकसि संम्यापटिपति गुलूनं अप ...... मे समनबाभनानं दाने एस अंने च . ..... धंममंगले नाम (८) से वतवियेपितिना पि पुतेन पि भातिना पि सुवामिकेन पि ... .. ले आव तस अठस निफतिया (९) अथि च हेवं वुते दाने साधू ति (१०) से नथि.........अनुगहे वा आदिसे धंमदाने धंमानुगहे .(११)...... मि....... *तिकेन सहायेन पि वियोवदित*...... *तसि पकलनसि* इयं... . .. .. लाधयितवे (१२) .... टव ..... . स्वगस आलधी।

प्रज्ञापन १०

(१) देवानंपिये पियदसी लाजा, यसो वा किटी वा न ....हं मंनते.........यसो वा किटी वा इछति तदत्वाये आ ....जने... ... सुसं सुसूसतु मे धंम........मे (२) एतकाये यसो वा किटी वा इ...... पलकमति देवानंपिये पालतिकाये... किंति सकले अपपलिसवे हुवेया ति (४) पलिस...... ..(५) दुकले

.........त थगेन.........न सर्व च पलितितिजितु सुदकेन या वसटेन या (६) वसटेन चु दुफलतले।

प्रज्ञापन १४

(१) इयं धंमलिपी देवानंपियेन पियदसिना लाजिना लिखा .... अथि मझिमेन ...... हि सवे सवत घटिते (३) महंते हि विजये बहुके च लिखिते लिखियिस .... (४) अथि ...... वुते वस .... याये किंति च जने तथा पटिपजेया ति (५) ए पि चु हेत असमति लिखिते स ....सं... लोचयितु ......फला ....ति।

धौली का प्रथक प्रज्ञापन १

(१) देवानंपियस वचनेन तोसलियं महामात नगलवियोहालका वतविय (२) अं किछि दखामि हकं तं इछामि किंति कंमन पटिपादयेहं दुवालते च आलभेहं (३) एस च मे मोख्यमत दुवाल एतसि अठसि अं तुफेसु अनुसथि (४) तुफे हि बहूसु पानसहसेसुं आयत पनयं गछेम सु मुनिसानं (५) सवे मुनिसे पजा ममा (६) अथा पजाये इछामि हकं किंति सवेन हितसुखेन हिदलोकिक-पाललोकिकेन यूजेवू ति तथा ˙ मुनिसेसु पि इछामि हकं (७) नो च पापुनाथ आवगमुके इयं अठे (८) केछ व एकपुलिसे ˙ ˜ नाति एतं से पि देसं नो सवं (९) देखत हि तुफे एतं सुविहिता पि (१०) नितियं एकपुलिसे पि अथि ये बंधनं वा पलिकिलेसं वा पापुनाति (११) तत होति अकस्मा तेन बधनंतिक अने च ˙ ˙˙ ˙ हु जने दवियं दुखीयति (१२) तत इछितविये तुफेहि किंति मझं पटिपादयेमा ति (१३) इमेहि चु जातेहि नो संपटिपजति इसाय आसुलोपेन निठूलियेन तूलनाय अनावूतिय आलसियेन किलमथेन (१४) से इछितविये किंति एते जाता नो हुवेवु ममा ति (१५) एतस च सवस मूले अनासुलोपे अतूलना च (१६) नितियं ए किलंते सिया न ते उगछ संचलितविये तु पटितविये एतविये वा (१७) हेवंमेव ए दखेय तुफाक तेन वतविये

आनंने देखत हेवं च हेवं च देवानंपियस अनुसथि (१८) से महाफले ए तस संपटिपाद महाअपाये असंपटिपति (१६) विपटिपादयमीने हि एतं नथि स्वगस आलधि नो लाजालधि (२०) दुआहले हि इमस कमस मे कुते मनोअतिलेके (२१) संपटिपजमीने चु एतं स्वगं आलाधयिसथ मम च आननियं एहथ (२२) इयं च लिपि तिसनखतेन सोतविया (२३) अंतला पि च तिसेन खनसि खनसि एकेन पि सोतविय (२४) हेवं च कलंतं तुफे चघथ संपटिपादयितवे (२५) एताये अठाये इयं लिपि लिखित हिद एन नगलवियोहालका सस्वतं समयं यूजेवू ति · · नस अकस्मा पलिबोधे व अकस्मा पलिकिलेसे व नो सिया ति (२६) एताये च अठाये हकं मते पंचसु पंचसु वसेसु निखामयिसामि ए अखखसे अचंडे सखिनालभे होसति एतं अठं जानितु ·· तथा कलति अथ मम अनुसथी ति (२७) उजेनिते पि चु कुमाले एताये व अठाये निखामयिस · हेदिसमेव वग नो च अतिकामयिसति तिंनि वसानि (२८) हेमेव तखसिलाते पि (२६) अदा अ · ते महामाता निखमिसति अनुसयान तदा अहापयितु अतने कंमं एतं पि जानिसंति तं पि तथा कलति अथ लाजिने अनुसथी ति।

धौली का प्रथक् प्रज्ञापन २

(१) देवानंपियस वचनेन तोसलियं कुमाले महामाता च वतविय (२) अं किछि दखामि हकं तं इ...... दुवालते च आलभेहं (३) एस च मे मोख्यमत दुवाला एतसि अठसि अं तुफेसु...... मम (४) अथ पजाये इछामि हकं किंति सवेन हितसुखेन हिदलोकिकपाललोकिकाये युजेवू ति हेवं ... (६) सिया अंतानं अविजितानं किछंदे सु लाज अफेसु (७)... मव इछ मम अंतेसु ..... पापुनवु ते इति देवानंपिय ... अनुविगिन ममाये हुवेवू ति अस्वसेवु च सुखंमेव लहेवु ममते नो दुखं हे ..नेवू इति खमिसति ने देवानंपिये अफाका ति ए चकिये खामतवे मम निमितं व च धंमं चलेवू हिदलोक पललोकं च आलाधयेवू (८) एतसि अठसि हकं अनुसासामि तुफे अनने एतकेन हकं अनुसासितु छंदं च वेदितु आ हि धिति पटिंना च ममा अजला (९) से हेवं कटु कंमे चलितविये अस्वास ... च तानि एन पापुनेवू इति अथ पिता तथ देवानंपिये अफाक अथा च अतानं हेवं देवानंपिये अनुकंपति अफे अथा च पजा हेवं मये देवानंपियस (१०) से हकं अनुसासितु छंदं च वेदितु तुफाक देसायुतिके होसामि एताये अठाये (११) पटिबला हि तुफे अस्वासनाये हितसुखाये च तेस हिदलोकिकपाललोकिकाये (१२) हेवं च

कलंतं तुफे स्वगं आलाधयिसथ मम च आननियं एहथ (१३) एताये च अठाये इयं लिपि लिखिता हिद एन महामाता स्वसतं सम युजिसंति अस्वासनाये धंमचलनाये च तेस अंतानं (१४) इयं च लिपि अनुचावुंमासं तिसेन नखतेन सोतविया (१५) कामं चु खणसि खनसि अंतला पि तिसेन एकेन पि सोतविय (१६) हेवं कलंतं तुफे चघथ संपटिपादयितवे ।

जौगड़

प्रज्ञापन १

(१) इयं धंमलिपी खेपिंगलसि पवतसि देवानंपियेन पियदसिना लाजिना लिखापिता (२) हिद नो किछि जीवं आलभितु पजोहितविये (३) नो पि च समाजे कटविये (४) बहुकं हि दोसं समाजस द्रखति देवानंपिये पियदसी लाजा (५) अथि पि चु एकतिया सभाजा साधुमता देवानंपियस पियद्रसिने लाजिने (६) पुलुवं महानससि देवनंपियस पियदसिने लाजिने अनुदिवसं बहूनि पानसतसहसानि आलभियिसु सूपठाये (७) से अज यदा इयं धंमलिपी लिखिता तिंनि येव पानानि आलंभियंति दुवे मजूला एके मिगे से पि चु मिगे नो धुवं (८) एतानि पि चु तिंनि पानानि पछा नो आलभियिसंति।

प्रज्ञापन २

(१) सवत विजितसि देवानंपियस पियदसिने लाजिने ए वा पि अंता अथा चोडा पंडिया सतियपुते ····· ···) अंतियोके नाम योनलाजा ए वा पि तस अंतियोकस सामंता लाजाने सवत देवानंपियेन पियदसिना लाजि चिकिसा. च पसुचिकिसा

च (३) ओसधानि आनि मुनिसोपगानि पसुओपगानि च अतत नथि सवत·········च अतत नथि सवत्र हालापिता च लोपापिता च (४) मगेसु उदुपानानि खानापितानि लुखानि च·········।

प्रज्ञापन ३

(१) देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा (२) दुवादसव-साभिसितेन मे इयं आ····· च पादेसिके च पंचसु पंचसु वसेसु अनुसयानं निखमावू अथा अंनाये पि कंमने·········सा मितसंथुतेस ····· नातिसु च धंमनसमनेहि साधु दाने जीवेसु अनालंभे साधु ····· यि ····· हेतुते च वियंजनते च।

प्रज्ञापन ४

(१) अतिकंतं अंतलं बहूनि वससतानि वढिते व पाना-लंभे ····· (२) से अज देवानंपियस पियदसिने लाजिने धंमचलनेन भेल ····· दिवियानि लूपानि द्रसयितु मुनिसानं (३) आदिसे बहूहि वससते········ धंमानुसथिया अनालंभे पानानं अविहिसा भूतानं नातिसु संप······ (४) एस अंने च बहुविधे धंमचलने वढिते (५) वढयि········ पियदसिने लाजिने पवढयिसंति येव धंमचल········ (८) धंमचलने पि चु नो होति ······ हीनि च मा अलोचयि ··।

प्रज्ञापन ५

(१) देवानंपिये पियद ' '' 'नती व पलं च ते सुपदालये (८) से अ ' धंमाधियाना ' '' भनिभि ' मोखाये ' '' ए वा ।

प्रज्ञापन ६

(१) नंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा (२) अतिकतं अंतलं नो हूतपुलुवे सवं कालं अठकमे पटिवेदना व (३) से ममया कटे (४) सव कालं '' स मे अते ओलोधनसि गभागालसि वचसि विनीतसि उयानसि च सवत पटिवेदका जनस अठ प्रटिवेदयंतु मे ति (५) सवत च जनस ' '' 'कं (६) अं पि च किछि मुखते आनपयामि दापकं वा सावकं वा ए वा महा-मातेहि अतियायिके आलोपिते होति तसि अठसि विवादे व लिसायं आनंतलियं पटिवेदेतविये मे ति सवत सवं कालं (७) हेवं मे अनुसथे (८) नथि हि मे तोसे उठानसि अठसंतीलनाय च (९) 'मे सवलोकहिते (१०) तस च पन इयं मूले उठाने च अठ-संतीलना च (११) नथि हि कंमतला सवलोकहितेन (१२) अं च किछि पलक्रमामि हकं ''' ' ''' नियं येहं ति हिद च कानि सुखयामि पलत च स्वगं आलाधयतु ति (१३) एताये अठाये इयं धंमलिपी लिखिता चिलठितीका होतु ' ता मे पलकमतु सवलोकहिताये (१४) दुकले चु इयं अंनत अगेन पलक्रमेन ।

प्रज्ञापन ७

(१)·········दसी लाजा सवत इछति सवपासंडा वसे···ति (२) सवे हि ते सयमं भावसुधी च इछंति (३) मुनिसा च उचावुचछंदा उचावुचलागा (४)·········सं व कछंति (५) विपुले पि चा दाने·········धी च नीचे चाढं।

प्रज्ञापन ८

·········विया अंनानि च एदि ········ मानि हुवंति नं (३) से देवानंपिये पिय ·· ·····दस·········ता (४) ततेस होति स·· ·····च दाने च वुढानं दसने च हिलंनपटिविधाने च······ धंमपलिपुछा··· ·· लाभे होति देवानंपियस पियदसिने लाजिने भागे अ ·· · ।

प्रज्ञापन ९

(१) देवानंपिये पियदसी लाजा ··· · पजुपदाये पवाससि एताये अंनाये च हेदिसाये जने वहुकं ····· ··च मंगलं कलेति (४) से कटविये चेव खो मंगले (५) अपफले चु खो एस हेदिसे म·· ···(६) इयं चु ······· समटकासि संम्यापटिपति गुलूनं अपचिति पानेसु सयमे समनबाभनानं दाने एस अंने········· पितिना पि पुतेन पि भातिना पि सुवामिकेन पि इयं साधु इयं कटविये··· · ·· से दाने अनुगहे या आदिसे धंमदाने धंमानुगहे च

(११)से चु खो मितेन ·· य साधू इमेन सकिये स्वगे आलाधयितवे (१८) किं हि इमेन कटवियतला ·· ··   ।

प्रज्ञापन १०

(१) ····· ··यसो वा किटी वा इछति तदत्वाये आयतिये च जने धमसुसूस सुसूसतु मे ··ति देवानपिये पालतिकाये वा किंति सकले अपपलिसवे हुवेया ति (४)   लितिजितु खुदकेन वा उसटेन वा (५) उसटेन चु दुक्लतले ।

प्रज्ञापन १४

(१)   मझिमेन अथि वियटेन (२) नो हि सवे सवत घटिते (३) महते हि विजये   स माधुलियाये किंति च जने तथा पटिपजेया ति (५) ए पि चु हेत   ।

जौगड़ा का प्रथक प्रज्ञापन १

(१) देवानंपिये हेवं आहा (२) समापायं महामाता नगलवियोहालक हेवं वतविया (३) अं किछि दखामि हकं तं इछामि किंति कं कमन पटिपातयेहं दुवालते च आलभेहं (४) एस च मे मोखियमत दुवालं अं तुफेसु अनुसथि (५) फे हि बहूसु पानसहसेसु आयत पनयं गछेम सु मुनिसानं (६) सवमुना मे पजा (७) अथ पजाये इछामि किंति मे सवेन हितसुखेन युजेयू ति हिदलोगिकपाललोकिकेन हेमेव मे इछ सवमुनिमेसु (८) नो चु तुफे एतं पापुनाथ आवगमुके इयं अठे (९) केचा एकमुनिसे पापुनाति से पि देसं नो सवं (१०) दखय हि तुफे पि सुविता पि (११) बहुक अठि ये एति एकमुनिसे बधनं पलिकिलेसं पि पापुनाति (१२) तत होति अकस्मा ति तेन बधनंतिक अन्ये च वगे बहुके वेदयति (१३) तत तुफेहि इछितये किंति मझं पटिपातयेम (१४) इमेहि जातेहि नो पटिपजति इसाय आसुलोपेन निठूलियेन तुलाय अनावुतिय आलस्येन किलमथेन (१५) हेवं इछितविये किंति मे एतानि जातानि नो हेयू ति (१६) सवस चु इयं मूले अनासुलोपे अतुलना च (१७) निति‍यं एयं किलते सिय · ····संचलितु उथाया संचलितव्ये तु वटितविय पि एतविये पि नीतियं (१८) एवे दखेया आनंने गिझपेतविये हेवं हेवं च देवानंपियस अनुसथि ति (१९)

एतं संपटिपातयंतं महाफले होति असंपटिपति महापाये होति (२०) विपटिपातयंतं नो स्वगआलधि नो लाजाधि (२१) दुआहले एतस कंमस स मे कुते मनोअतिलेके (२२) एतं संपटिपजमीने मम च आननेयं एसथ स्वगं च आलाघयिसथा (२३) इयं चा लिपी अनुतिसं सोतविया (२४) अला पि खनेन सोतविया एककेन पि (२५) ''''''मीने चघथ''''''''तवे (२६) एताये च अठाये इयं लिखिता लिपी एन महामात नगलक सस्वतं समयं एतं युजेयु ति एन मुनिसानं अ'''''''' ने पलिकि '''''' '' ये पंचसु पंचसु वसेसु अनुसयानं निखामयिसामि महामातं अचंडे अफलुसं त ''''''''पि कुमाले वि ' त''''''''मयि'''' ' '''लाते ' '
''''''''वचनिक अद अनुसयानं निखमिसंति अतने कंमं'''' ''
यितु तं पि तथा कलंति अथा''''''''

जौगड़ का पृथक प्रज्ञापन २

(१) देवानंपिये हेवं आह (२) समापायं महमता लाजवचनिक वतविया (३) अं किछि दखामि हकं तं इछामि हकं किंति कं कमन पटिपातयेहं दुवालते च आलमेहं (४) एस च मे मोखियमत दुवाल एतस अथस अं तुफेसु अनुसथि (५) सवमुनिसा मे पजा (६) अथ पजाये इछामि किंति मे सवेण हितसुखेन युजेयू अथ पजाये इछामि किंति मे सवेन हितसुखेन युजेयू ति हिदलोगिकपाललोकिकेण हेवंमेव मे इछ सवमुनिसेसु (७) सिया अंतानं अविजिता नं किंछादि सु लाजा अफेसू ति (८) एताका वा मे इछ अंतेसु पापुनेयु लाजा हेव इछति अनुविगिन व्हेयू ममियाये अस्वसेयु च मे सुखंमेव च लहेयू ममते नो खं हेवं च पापुनेयु खमिसति ने लाजा ए सकिये खमिनवे ममं निमितं च धंमं चलेयू ति हिदलोगं च पललोग च आलाधयेयू (९) एताये च अठाये हकं तुफेनि अनुसासामि अनले एतकेन हकं तुफेनि अनुसासितु छंदं च वेदितु आ मम धिति पटिना च अचल (१०) स हेवं कटु कंमे चलितविये अस्वासनिया च ते एन ते पापुने यु अथा पित हेवं ने लाजा ति अथ अतानं अनुकंपति हेवं अफेनि अनुकंपति अथा पजा हे वं मये लाजिने (११) तुफेनि हक अनुसासित छांदं च वेदित आ मम धिति पटिना चा अचल सकल देसाआयुतिके

ॐदोसामी एतसि अथसि (१२) अलं हि तुफे अस्वासनाये हितसुखाये च हेसं हिद लोगिकपाललोकिकाये (१३) हेवं च कलंतं स्वगं च आलाधयिसथ मम च आननेयं एसथ (१४) एताये च अथाये इयं लिपी लिखित हिद एन महामाता सास्वतं समं युजेयू अस्वासनाये च धंमचलनाये च अंतानं (१५) इयं च लिपी अनुचातुंमासं सोतविया तिसेन (१६) अंतला पि च सोतविया (१७) खने संतं एकेन पि सोतविया (१८) हेवं च कलंतं चघथ संपटिपातयितवे।

सोपारा

प्रज्ञापन ८

.... "निखमिठ स..............(५)हेत इयं होति धंभ
.. वुढानं दसने च हिरंनपटिविधाने च .....धंमानुसथि धंम ..
ये रती होति दे ....ने भागे अं ....।

प्रधान स्तम्भ लेख

देहली–तोपरा

प्रज्ञापन १

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा (२) सडुवीसतिवसअभिसितेन मे इय धमलिपि लिखापिता (३) हिदतपालते दुसपटिपादये अंनत अगाया धंमकामताया अगाय पलीखाया अगाय सुसूयाया अगेन भयेना अगेन उसाहेना (४) एस चु खो मम अनुसथिया धंमापेखा धंमकामता चा सुवे सुवे वढिता, वढीसतिचेवा (५) पुलिसा पि च मे उकसा चा गेवया चा मझिमा चा अनुविधीयती संपटिपादयंति चा अल चपलं समादपयितवे (६) हेमेवा अंतमहामाता पि (७) एस हि विधि या इय धमेन पालना धमेन विधाने धमेन सुखियना धमेन गोती ति ।

प्रज्ञापन २

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा (२) धंमे साधू कियं चु धंमे ति (३) अपासिनवे बहु कयाने दया दाने सचे सोचये (४) चखुदाने पि मे बहुविधे दिंने (५) दुपदचतुपदेसु

परिवालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ पानदाखिनाये (६) अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि (७) एताये मे अठाये इयं धंमलिपि लिखापिता हेवं अनुपटिपजंतु चिलंथितिका च होतू ती ति (८) ये च हेवं संपटिपजीसति से सुकटं कछती ति ।

प्रज्ञापन ३

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं अहा (२) कयानंमेव देखति इयं मे कयाने कटे ति (३) नो मिन पापं देखति इयं मे पापे कटे ति इयं वा आसिनवे नामा ति (४) दुपटिवेखे चु खो एसा (५) हेवं चु खो एस देखिये (६) इमानि आसिनवगामीनि नाम अथ चंडिये निठूलिये कोधे माने इस्या कालनेन व हकं मा पलिभसयिसं (७) एस बाढ देखिये (८) इयं मे हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये ।

प्रज्ञापन ४

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा (२) सडुवीसतिवसअभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापिता (३) लजूका मे बहूसु पानसतसहसेसु जनसि आयता (४) तेसं ये अभिहाले वा दंडे वा अतपतिये मे कटे किंति लजूका अस्वथ अभीता कंमानि पवतयेवू जनस जानपदसा हितसुखं उपदहेवू अनुगहिनेवु च (५) सुखीयनदुखीयनं जानिसंति धंमयुतेन च वियोवदिसंति जनं

जानपदं किति हिदतं च पालतं च आलाधयेवू ति (६) लजूका पि लघंति पटिचलितवे मं (७) पुलिसानि पि मे छंदंनानि पटिचलि संति (८) ते पि च कानि वियोवदिसंति येन मं लजूका चघंति आलाधयितवे (६) अथा हि पज वियताये धातिये निसिजितु अस्यथे होति वियत धाति चघति मे पजं सुखं पलिहटवे हेवं ममा लजूका कटा जानपदस हितसुखाये (१०) येन एते अभीता अस्वथ संतं अविमना कंमानि पवतयेवू ति एतेन मे लजूकानं अभिहाले व दंडे वा अतपतिये कटे (११) इछितविये हि एसा किंति वियो-हालसमता च सिय दंडसमता चा (१२) अव इते पि च मे आवुति बंधनबधानं मुनिसानं तीलितदंडानं पतवधानं तिंनि दिवसानि मे योते दिंने (१३) नातिका व कानि निझपयिसंति जीविताये तानं नासंतं वा निझपयिता दानं दाहंति पालतिकं उपवासं व कछंति (१४) इछा हि मे हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवू ति (१५) जनस च वढति विविधे धंमचलने संयमे दानसविभागे ति।

प्रज्ञापन ५

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं अहा (२) सडुवीस-तिवसअभिसितेन मे इमानि जातानि अवधियानि कटानि सेयथा सुके सालिका अलुने चकवाके हंसे नंदीमुखे गेलाटे जतूका अंबा-कपीलिका दडी अनठिकमछे वेदवेयके गंगापुपुटके संकुजमछे कफटसयके पंनससे सिमले संडके ओकपिंडे पलसते सेतकपोते गामकपोते सवे चतुपदे ये पटिभोगं नो एति न च खादियति (३)

.... ि एडीका चा सूकली चा गभिनी च पायमीना च अवधियपतके पि च कानि आसंमासिके (४) वधिकुकुटे नो कटविये (५) तुसे सजीवे नो झापेतविये (६) दावे अनठाये वा विहिसाये वा नो झापेतविये (७) जीवेन जीवे नो पुसितविये (८) तीसु चातुंमासीसु तिसायं पुंनमासियं तिंनि दिवसानि चावुदसं पंनडसं पटिपदाये धुवाये चा अनुपोसथं मछे अवधिये नो पि विकेतविये (६) एतानि येवा दिवसानि नागवनासि केवटभोगसि यानि अंनानि पि जीवनिकायानि न हंतवियानि (१०) अठमीपखाये चावुदसाये पंनडसाये तिसाये पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने नो नीलखितविये अजके एडके सूकले ए वा पि अने नीलखियति नो नीलखितविये (११) तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमासिपखाये अस्वसा गोनसा लखने नो कटविये (१२) यावसडुवीसतिवसअभिसितेन मे एताये अंतलिकाये पंनवीसति बंधनमोखानि कटानि ।

प्रज्ञापन ६

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं अहा (२) दुवाडसवसअभिसितेन मे धंमलिपि लिखापिता लोकसा हितसुखाये से तं अपहटा तं तं धंमवढि पापोवा (३) हेव लोकसा हितसुखे ति पटिवेखामि अथ इयं नातिसु हेवं पतियासंनेसु हेवं अपकठेसु किम कानि सुखं अवहामी ति तथ च विदहामि (४) हेमेवा सवनिकायेसु पटिवेखामि (५) सवपासंडा पि मे पूजिता विविधाय

पूजाया (६) ग घु इयं अतना पचूपगमने से मे मोख्यमते (७) सडुवीसतिवसअभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापिता ।

प्रज्ञापन ७

देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा (२) ये अतिकंतं अंतलं लाजाने हुसु हेवं इछिसु कथं जने धंमवढिया वढेया नो चु जने अनुलुपाया धंमवढिया वढिया (३) एतं देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा (४) एस मे हुथा (५) अतिकंतं च अंतलं हेवं इछिसु लाजाने कथं जने अनुलुपाया धंमवढिया वढेया ति नो च जने अनुलुपाया धंमवढिया वढिया (६) से किनसु जने अनुपटिपजेया (७) किनसु जने अनुलुपाया धंमवढिया वढेया ति (८) किनसु कानि अभ्युंनामयेहं धंमवढिया ति (६) एतं देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा (१०) एस मे हुथा (११) धंमसावनानि सावापयामि धंमानुसथिनि अनुसासामि (१२) एतं जने सुतु अनुपटीपजीसति अभ्युंनमिसति धंमवढिया च बाढं वढिसति (१३) एताये मे अठाये धंमसावनानि सावपितानि धंमानुसथिनि विविधानि आनपितानि य······सा पि बहुने जनसि आयता ए ते पलियोवदिसंति पि पवियलिसंति पि (१४) लजूका पि बहुकेसु पानसतसहसेसु आयता ते पि मे आनपिता हेवं च हेवं च पलियोवदाथ जनं धंमयुतं (१५) देवानंपिये पियदसि हेव आहा (१६) एतमेव मे अनुवेखमाने धंमथंभानि कटानि धंममहामाता कटा धम··· ···कटे (१७) देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा

(१८) मगेसु पि मे निगोहानि लोपापितानि छायोपगानि होसंति पसुमुनिसानं अंबावडिक्या लोपापिता (१६) अढकोसिक्यानि पि मे उदुपानानि खानापापितानि निंसिढया च कालापिता (२०) आपानानि मे बहुकानि तत तत कालापितानि पटीभोगाये पसुमुनिसानं (२१) ल " एस पटीभोगे नाम (२२) विविधाया हि सुखायनाया पुलिमेहि पि लाजीहि ममया च सुखयिते लोके (२३) इमं चु धंमानुपटीपती अनुपटीपजंतु ति एतदथा मे एस कटे (२४) देवानंपिये पियदसि हेवं आहा (२५) धंममहामाता पि मे ते बहुविधेसु अठेसु आनुगहिकेसु वियापटासे पवजीतानं चेव गिहिथानं च सव " डेसु पि च वियापटासे (२६) संघठसि पि मे कटे इमे वियापटा होहंति ति हेमेव बाभनेसु आजीविकेसु पि मे कटे इमे वियापटा होहंति ति निगंठेसु पि मे कटे इमे वियापटा होहंति नानापासंडेसु पि मे कटे इमे वियापटा होहंति ति पटिविसिठं पटीविसिठं तेसु तेसु ते " माता (२७) धंममहामाता चु मे एतेसु चेव वियापटा सवेसु च अंनेसु पासंडेसु (२८) देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा (२९) एते च अंने च बहुका मुखा दानविसगसि वियापटासे मम चेव देविनं च सवसि च मे ओलोधनसि ते बहुविधेन आकालेन तानि तानि तुठायतनानि पटी …………हिद चेव दिसासु च (३०) दालकानं पि च मे कटे अंनानं च देविकुमालानं इमे दानविसगेसु वियापटा होहंति ति धंमापदानठाये धंमानुपटिपतिये (३१) एस हि धंमापदाने धंमपटीपति च या इयं दया दाने सचे सोचवे मदवे साधवे च लोकस हेवं वढिसति ति (३२) देवानंपिये प ' स लाजा हेवं आहा

(३३) यानि हि कानिचि ममिया साधवानि कटानि तं लोके अनुपटीपंने तं च अनुविधियंति (३४) तेन वढिता च वढिसंति च मातापितिसु सुसुसाया गुलुसु सुसुसाया वयोमहालकानं अनुपटीपतिया वाभनसमनेसु कपनवलाकेसु आव दासभटकेसु संपटीपतिया (३५) देवानंपिय ` यदसि लाजा हेवं आहा (३६) मुनिसानं चु या इयं धंमवढि वढिता दुवेहि येव आकालेहि धंम. नियमेन च निझतिया च (३७) तत चु लहु से धंमनियमे निझतिया व भुये (३८) धंमनियमे चु खो एस ये मे इयं कटे इमानि च इमानि जातानि अवधियानि (३९) अंनानि पि चु बहुक `` धंमनियमानि यानि मे कटानि (४०) निझतिया व चु भुये मुनिसानं धंमवढि वढिता अविहिंसाये भुतानं अनालंभाये पानानं (४१) से एताये अथाये इयं कटे पुतापपोतिके चंदमसुलियिके होतु ति तथा च अनुपटीपजंतु ति (४२) हेवं हि अनुपटीपजंतं हिदतपालते आलधे होति (४३) सतविसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिवि लिखापापिता ति (४४) एतं देवानंपिये आहा (४५) इयं धमलिवि अत अथि सिलाथंभानि वा सिलाफलकानि वा तत कटविया एन एस चिलठितिके सिया।

देहली–मेरठ

प्रज्ञापन १

………नं धंमेन विधाते धमे……… ।

प्रज्ञापन २

(१) देवानपिये पियदसि लाज हेवं आ… (२) धंमे साधु कियं … मे ति (३) श्रपासिनवे बहु कयाने दया दाने सचे सोचये (४) चखुदाना पि मे बहुविधे दिंने (५) दुपदचतुपदेसु पखिवालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ पानदाखिनाये (६) अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि (७) एताये मे अठाये इयं धंमलिपि लिखापिता ………अनुपटिपजंतु चिलंथितिका च होतू ति (८) ये च… … सति से सुकटं कछती ति ।

प्रज्ञापन ३

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा (२) कयानंमेव दे ……… कयाने कटे ती (३) नो मिना पापं देखति इयं मे पापे कटे ति इयं व आसिनवे नामा ति (४) दुपटिवेखे चु खो एसा

(५) हेयं चु खो एस देखिये (६) इमानि आसिनयगामीनि नाम अथ चंडिये निठूलिये कोधे माने इस्या कालनेन व हकं मा पलिभसयिसं (७) ...... याढं देखिये (८) इयं मे हिदतिकाये इयं मे पालतिकाये ।

प्रज्ञापन ४

....क यपंति आलाधयितवे .... तु अस्वथे होति विय'' ....लिद्दटवे हेवं ममा लजूक .... ये (१०) येन एते अभीता अस्वथ सं'...... .... पथलयेवू ति एतेन मे लजूकानं .... अतपतिये कटे (११) इछितवि ... हालसमता च सिया दंडसम ' .... मे आवुति बंधनबधानं मुनिसानं .... बधानं तिंनि दिविसानि मे योते दिंने (१२) ... . .. ' पयिसंति जीवितापे तानं नासंतं वा नि '' . . ' ति पालतिकं उपवासं वा क ....हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधये धढति विविधे धंमचलने संयमे दान ''

प्रज्ञापन ५

.... .. ' पोतके पि च कानि ... . .. --के (४) वधि- इकुटे नो कटविये (५) -तुसे -सजीवे .... ' तविये (६) दावे अनठाये वा विहिसाये वा नो कापेतविये (७) जीवेन जीवे नो पुसितविये (८) तीसु चातंमासीसु तिसायं पुंनमासियं तिंनि

दिवसानि चावुदसं पंनडस पटिपदा ध्रुवाये च अनुपोसथं मछे अवधिये नो पि विकेतविये (६) एतानि येव दिवसानि नागवनसि केवटभोगसि यानि अंनानि पि जीवनिकायानि नो हंतवियानी (१०) अठमिपखाये चावुदसाये पंनडसाये तिसाये पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने नो नीलखितविये अजके एडके सूकले ए वा पि अंने नीलखियति नो नीलखितविये (११) तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमासपखाये अस्वसा गोनसा लखने नो''' 'विये (१२) यावसडुवीसतिवसअभिसितेन मे एताये अंतलिकाये पंनवीसति बंधनमोखानि कटानि ।

प्रज्ञापन ६

''''''''''''''-पगमने से मे मोख्यमते (७) सडु'' '' ''
'''' सितेन मे इयं धंमलिपि लि ' '' ''''''

सडुवीमतिवसाभिसितेन मे इमानि जातानि अवधियानि कटानि सेयथ सुके सालिका अलुने चकवाके ······नदीमुखे गेलाटे जतूका अनाकिपिलिका दुडी अनठिकमछे वेदवेयके गंगापुपुटके सकुजमछे कफट ···· के पंनससे सिमले सड · · तकपोते गामकपोते सवे चतुपदे ये पटिभोग नो ना ·· पायमी · ·· सजीवे नो माप नि चावुदस पचद · ·· नि··· · · लखने नो कटविये (१२) या ····· ·· ··

प्रज्ञापन ६

(१) · पिये पियदसी ला ·· ·· त · दि पा (३) हेव लोकस हितसुखे ति पटिवेखामि अथ इय ष पत्यासंनेसु हेव अपकठेसु किम कानि · ··· विदहामि (४) हेवमेव सव · कायेसु पटिवेखामि (५) सवपासडा पि मे पूजिता विविधाय पूजाया (६) ए चु इय अतना पचुपगमने से मे मुख्यमुते (७) लिपी लिखापिता ति ।

रामपुरवा

प्रज्ञापन १

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेव आह (२) सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापित (३) हिदतपालते दुसंपटिपादये अंनत अगाय धंमकामताय अगाय पलीखाय अगाय सुसूमाय अगेन भयेन अगेन उसाहेन (४) एस चु खो मम अनुसथिय धंमापेख धंमकामता च सुवे सुवे वढित वढिसति चेव (५) पुलिसा पि मे उकसा च गेवया च मझिमा च अनुविधीयंति संपटिपादयंति च अलं चपलं समादपयितवे (६) हेमेव अंतमहामाता पि (७) एसा हि विधि या इयं धंमेन पालन धंमेन विधाने धंमेन सुखीयन धंमेन गोती ति।

प्रज्ञापन २

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह (२) धंमे साधु कियं चु धंमे ति (३) अपासिनवे बहु कयाने दय दाने सचे सोचेये ति (४) चखुदाने पि मे बहुविधे दिंने (५) दुपदचतुपदेसु पखिवालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ पानदखिनाये (६) अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि (७) एताये मे अठाये इयं

इलाहाबाद

प्रज्ञापन १

(१) देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा (२) सडुवीसतिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापिता (३) हिदतपालते दुसंपटिपादये अंनत अगाय धंमकामताय अगाय पलीखाय अगाय सुसूसाया अगेन भयेन अगेन उसाहेन (४) एस चु खो मम अनुसथिया धंमपेखा धंमकामता च सुवे सुवे वढिता वढिसति चेवा (५) पुलिसा पि मे उकसा च गेवया च मझिमा च अनुविधीयंति संपटिपादयति च अलं चपलं समादपयितवे (६) हेमेव अंतमहामाता पि (७) एसा हि विधि या इयं धंमेन पालना धंमेन विधाने धंमेन सुखीयना धंमेन गुति ति च।

प्रज्ञापन २

(१) देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा (२) धमे साधु कियं चु धंमे ति (३) अपासिनवे बहु कयाने दया दाने सचे सोचये (४) चखुदाने पि मे बहुविधे दिंने (५) दुपदचतुपदेसु पखिवालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ पानदखिनाये (६) अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि एताये मे अठाये इयं धंमलिपि

लिखापिता हेवं अनुपटिपजंतु चिलठितीका च होतू ति (८) ये च हेवं संपटिपजिसति से सुकटं कछती ति ।

प्रज्ञापन ३

(१) देवानंपिये पियदसी लाजा हेवं आहा (२) कयानमेव देखति इयं मे कयाने कटे ति (३) नो मिन पापकं देखति इयं मे पापके कटे ति इयं वा आसिनवे नामा ति ··· ····· ।

प्रज्ञापन ४

··· · ··· कानं अभिहाले वा वंडे वा अतपतिये कटे (११) इछितविये हि एस किंति ···· ···· लसमता च सिया दंडसमता च १२) आव इते पि च मे आवुति वंयनबधानं मुनिसानं तीली· तदंडानं पतवधानं तिंनि दिवसानि योते दिंने (१३) ' '' का व कानि निभपयिसंति जीविताये तानं नासंतं या निभपयिता दानं दाहंति पालतिकं उपवासं वा कछंति (१४) '' ····· हि मे हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवु (१५) जनस च वढति विविधे धंमचलने सयमे दानसविभागे ।

प्रज्ञापन ५

(१) ·········पिये पियदसी लाजा हेवं आहा (२)

धंमलिपि लिखापित हेवं अनुपटिपजंतु चिलंथितीका च होतू ति (८) ये च हेवं सपटिपजिसति से सुकटं कछती ति।

प्रज्ञापन ३ ·

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह (२) कयानंमेव देखंति इयं मे कयाने कटे ति (३) नो मिन पापं देखंति इयं मे पापे कटे ति इयं व आसिनवे नामा ति (४) दुपटिवेखे चु खो एस (५) हेवं चु खो एस देखिये (६) इमानि आसिनवगामीनि नामा ति अथ चंडिये निठूलिये कोधे माने इस्या कालनेन व हकं मा पलिभसयिसं (७) एस बाढं देखिये (८) इयं मे हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये ति।

प्रज्ञापन ४

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह (२) सडुवीस-तिवसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापित (३) लजूका मे बहूसु पानसतसहसेसु जनसि आयत (४) तेसं ये अभिहले व दंडे व अतपतिये मे कटे किंति लजूक अस्वथ अभीत कंमानि पवतयेवू ति जनस जानपदस हितसुखं उपदहेवु अनुगहिनेवु च (५) सुखीयनदुखीयनं जानिसंति धंमयुतेन च वियोवदिसंति जनं जानपदं किंति हिदतं च पालतं च आलाधयेवू ति (६) लजूका पि लघंति पटिचलितवे मं (७) पुलिसानि पि मे छंदंनानि पटि-

पलिसंति (८) ते पि च कानि वियोवदिसंति येन मं लजूक चपंति आलाधयितवे (९) अथा हि पजं वियताये धातिये निसि-जितु अस्वथे होति वियत धाति चपति मे पजं सुखं पलिहटवे ति हेवं मम लजूक कट जानपदस हितसुखाये (१०) येन एते अभीत अस्वथा संतं अविमन कंमानि पवतयेवू ति एतेन मे लजूकानं अभिहाले व दंडे व अतपतिये कटे (११) इछितविये हि एस किंति वियोहालसमता च सिय दंडसमता च (१२) आवा इते पि च मे आवुति बंधनबधानं मुनिसानं तीलितदंडानं पतवधानं तिंनि दिवसानि मे योते दिंने (१३) नातिका व कानि निझपयिसंति जीविताये तानं नासंतं व निझपयितवे दानं दाहंति पालतिकं उप-वासं व कछंति (१४) इछा हि मे हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवू ति (१५) जनस च वढति विविधे धंमचलने सयमे दानसविभागे ति ।

प्रज्ञापन ५

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेव आहा (२) सडुवी-सतिवसाभिसितेन मे इमानि पि जातानि अवध्यानि कटानि सेयथ सुके सालिक अलुने चकवाके हंसे नंदीमुखे गेलाटे जतूक अंबाक-पिलिक दुडि अनठिकमछे वेदवेयके गंगापुपुटके संकुजमछे कफट-सेयके पंनससे सिमले संडके ओकपिंडे पलसते सेतकपोते गामक-पोते सवे चतुपदे ये पटिभोगं नो एति न च खादियति (३) अजका नानि एडका च सूकली च गभिनी व पायमीना व अवध्य

पोतके च यानि श्रामंमासिके (४) वधिकुकुटे नो कटविये (५) तुसे सजीवे नो भापयितविये (६) दावे अनठाये व विहिसाये व नो भापयितविये (७) जीवेन जीवे नो पुसितविये (८) तीसु चातुंमासीसु तिस्यं पुंनमासिय तिंनि दिवसानि चावुदसं पंनडस पटिपदं धुवाये च अनुपोसथं मछे अवध्ये नो पि विकेतविये (६) एतानि ये व दिवसानि नागवनसि केवटभोगसि यानि अनानि पि जीवनिकायानि नो हंतवियानि (१०) अठमिपखाये चावुदसाये पंनडसाये तिसाये पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने नो निलखितविये अजके एडके सूकले ए वा पि अने नीलखियति नो नीलखितविये (११) तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमासिपखाये अश्वस गोनस लखने नो कटविये (१२) यावसडुवीसतिवसाभिसितेन मे एताये अंतलिकाये पनवीसति बंधनमोखानि कटानि ।

प्रज्ञापन ६

(१) देवानपिये पियदसि लाज हेव आह (२) दुवाडसवसाभिसितेन मे धंमलिपि लिखापित लोकस हितसुखाये से त अपहट त तं धमवढि पापोव (३) हेव लोकस हितसुखे ति पटिवेखामि अथ इयं नातिसु हेव पत्यासंनेसु हेव अपकठेसु कानि सुख आवहामी ति तथा च विदहामि (४) हेमेव सवनिकयेसु पटिवेखामि (५) सवपासडा पि मे पूजित विविधाय पूजाय (६) ए चु इयं अतन पचूपगमने से मे मोख्यमुते (७) सडुवीसतिवसाभिसितेन मे इय धमलिपि लिखापित ।

लौरिया–नन्दनगढ़

प्रज्ञापन १

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह (२) सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापित (३) हिदतपालते दुसंपटिपादये अंनत अगाय धंमकामताय अगाय पलीखाय अगाय सुसूसाय अगेन भयेन अगेन उसाहेन (४) एस चु खो मम अनुसथिय धंमापेखा धंमकामता च सुवे सुवे वढित वढिसति चेव (५) पुलिसा पि मे उकसा च गेवया च मभिमा च अनुविधीयंति संपटिपादयंति च अलं चपलं समादपयितवे (६) हेमेव अंतमहामाता पि (७) एसा हि विधि या इयं धंमेन पालन धंमेन विधाने धंमेन सुखीयन धमेन गोती ति ।

प्रज्ञापन २

(१) देवानंपियेन पियदसि लाज हेवं आह (२) धंमे साधु किय चु धंमे ति (३) अपासिनवे बहु कयाने दय दाने सचे सोचेये ति (४) चखुदाने पि मे बहुविधे दिंने (५) दुपदचतुपदेसु पखि-वालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ पानदखिनाये (६) अंनानि

पि च मे बहूनि कयानानि कटानि (७) एताये मे अठाये इयं धंमलिपि लिखापित हेव अनुपटिपजतु चिलंथितीका च होतू ति (८) ये च हेवं संपटिपजिसति से सुकटं कछति।

प्रज्ञापन ३

(१) देवानपिये पियदसि लाज हेवं आह (२) कयानमेव देखंति इय मे कयाने कटे ति (३) नो मिन पाप देखति इयं मे पापे कटे ति इय व आसिनवे नामा ति (४) दुपटिवेखे चु खो एस (५) हेव चु खो एस देखिये (६) इमानि आसिनवगामीनि नामा ति अथ चंडिये निठूलिये कोधे माने इरया कालनेन व हक मा पलिभसयिसं ति (७) एस बाढ देखिये (८) इय मे हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये ति।

प्रज्ञापन ४

(१) देवानपिये पियदसि लाज हेव आह (२) सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इय धमलिपि लिखापित (३) लजूका मे बहूसु पानसतसहसेसु जनसि आयता (४) तेसं ये अभिहाले व दंडे व अतप-तिये मे कटे किंति लजूक अस्वथ अभीत कंमानि पवतयेवू ति जनस जानपदस हितसुखं उपदहेवू अनुगहिनेवु च (५) सुखीयनदुखीयनं जानिसंति धमयुतेन च वियोवदिसंति जनं जानपद किंति हिदतं च पालतं च आलाधयेवू ति (६) लजूका पि लघंति पटिचलितवे

मं (७) पुलिसानि पि मे छंदंनानि पटिचलिसंति (८) ते पि च कानि वियोवदिसंति येन मं लजूक चघंति आलाधयितवे (६) अथा हि पजं वियताये धातिये निसिजितु अस्वथे होति वियत धाति चघति मे पजं सुखं पलिहटवे ति हेवं मम लजूक कट जानपदस हितसुखाये (१०) येन एते अभीत अस्वथा संतं अविमक कंमानि पवतयेवू ति एतेन मे लजूकानं अभिहाले व दंडे व अतपतिये कटे (११) इछितविये हि एस किति वियोहालसमता च सिय दंडसमता च (१२) आवा इते पि च मे आवुति बंधनबधानं मुनिसानं तीलितदंडानं पतवधानं तिंनि दिवसानि मे योते दिंने (१३) नातिका व कानि निझपयिसंति जीविताये तानं नासंतं व निझपयितवे दानं दाहंति पालतिकं उपवासं व कछंति (१४) इछा हि मे हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवू ति (१५) जनस च वढति विविधे धंमचलने सयमे दानसविभागे ति।

प्रज्ञापन ५

(१) देवानपिये पियदसि लाज हेवं आह (२) सडुवीसतिवसाभिसितस मे इमानि पि जातानि अवध्यानि कटानि सेयथा सुके सालिक अलुने चकवाके हंसे नंदीमुखे गेलाटे जतूक अंबाकपिलिक दुडि अनठिकमछे वेदवेयके गगापुपुटके संकुजमछे कफटसेयके पनससे सिमले संडके ओकपिंडे पलसते सेतकपोते गामकपोते सबे चतुपदे ये पटिभोगं नो एति न च खादियति (३) अजका नानि एडका च सूकली च गभिनी व पायमीना व अवध्य

पोतके च कानि आसंमासिके (४) वधिकुकुटे नो कटविये (५) तुसे सजीवे नो झापयितविये (६) दावे अनठाये व विहिसाये व नो झापयितविये (७) जीवेन जीवे नो पुसितविये (८) तीसु चातुंमासीसु तिसियं पुंनमासियं तिनि दिवसानि चावुदसं पनडसं पटिपदं धुवाये च अनुपोसथं मछे अवध्ये नो पि विकेतविये (९) एतानि येव दिवसानि नागवनसि केवटभोगसि यानि अंनानि पि जीवनिकायानि नो हंतवियानि (१०) अठमिपखाये चावुदसाये पनडसाये तिसाये पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने नो नीलखितविये अजके एडके सूकले ए वा पि अने नीलखियति नो नीलखितविये (११) तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमासिपखाये अस्वस गोनस लखने नो कटविये (१२) यावसडुवीसतिवसाभिसितेन मे एताये अंतलिकाये पनवीसति बंधनमोखानि कटानि।

प्रज्ञापन ६

(१) देवानपिये पियदसि लाज हेवं आह (२) दुवाडसवसाभिसितेन मे धमलिपि लिखापित लोकस हितसुखाये से त अपहट त त धंमवढि पापोव (३) हेवं लोकस हितसुखे ति पटियेखामि अथा इयं नातिसु हेव पत्यासंनेसु हेव अपकटेसु किंमं कानि सुखं आवहामी ति तथा च विदहामि (४) हेमेव सवनिकायेसु पटिवेखामि (५) सवपासंडा पि मे पूजित विविधाय पूजाय (६) ए चु इयं अतन पचूपगमने से मे मोख्यमुते (७) सडुवीसतिवसाभिसितेन मे इय धंमलिपि लिखापित।

लौरिया अराराज

प्रज्ञापन १

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह (२) सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापित (३) हिदतपालते दुसं-पटिपादये अंनत अगाय धंमकामताय अगाय पलीखाय अगाय सुसूसाय अगेन भयेन अगेन उसाहेन (४) एस चु खो मम अनुसथिय धंमापेख धंमकामता च सुवे सुवे वढित वढिसति चेव (५) पुलिसा पि मे उवसा च गेवया च मझिमा च अनुविधीयंति संपटिपादयंति च अलं चपलं समादपयितवे (६) हेमेव अंतमहामाता पि (७) एसा हि विधि या इयं धंमेन पालन धंमेन विधाने धंमेन सुखीयन धंमेन गोती ति।

प्रज्ञापन २

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह (२) धंमे साधु कियं चु धंमे ति (३) अपासिनवे बहु कयाने दय दाने सचे सोचेये ति (४) चखुदाने पि मे बहुविधे दिंने (५) दुपदचतुपदेसु पखिवालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ पानदखिनाये (६) अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि (७) एताये मे अठाये इयं

धमालिपि लिखापित हेवं अनुपटिपजंतु चिलंथितीका च होतू ति (८) ये च हेव संपटिपजिसति से सुकटं कछति ति।

प्रज्ञापन ३

देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह (२) कयानंमेव देखंति इयं मे कयाने कटे ति (३) नो मिन पापं देखंति इयं मे पापे कटे ति इयं व आसिनवे नामा ति (४) दुपटिवेखे चु खो एस (५) हेवं चु खो एस देखिये (६) इमानि आसिनवगामीनि नामा ति अथ चंडिये निठूलिये कोधे माने इस्य कालनेन व हकं मा पलिभसयिसं ति (७) एस बाढं देखिये (८) इयं मे हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये ति।

प्रज्ञापन ४

(१) देवानंपिये पियदसि जाल हेवं आह (२) सडुवीसति-वसाभिसितेन मे इयं धंमलिपि लिखापित (३) लजूका में बहूसु पानसतसहमेसु जनसि अयत (४ तेसं ये अभिहाले व दंडे व अतपतिये मे कटे किंति लजूक अस्वथ अभीत कंमानि पवतयेवू ति जनस जानपदस हितसुखं उपदहेवु अनुगहिनेवु च (५) सुखीयनदुखीयनं जानिसंति धंमयुतेन च वियोवदिसंति जनं जानपदं किंति हिदतं च पालतं च आलाधयेवु (६) लजूका पि लघंति पटिचलितवे मं (७) पुलिसानि पि मे छंदंनानि पटिचालि-

संति (८) ते पि च कानि वियोवदिसंति येन मं लजूक चघंति आलाघयितवे (६) अथा हि पजं वियताये धातिये निसिजितु अस्वथे होति वियत धाति चघति मे पंजं सुखं पलिहटवे ति हेव मम लजूक कट जानपदस हितसुखाये (१०) येन एते अभीत अस्वथा संतं अविमन कंमानि पवतयेवू ति एतेन मे लजूकानं अभिहाले व दंडे व अतपतिये कटे (११) इछितविये हि एस किंति वियोहालसमता च सिय दंडसमता च (१२) आवा इते पि च मे आवुति बंधनबधान मुनिसानं तीलितदंडानं पतवधान तिंनि दिवसानि मे योते दिंने (१३) नातिका व कानि निझपयिसंति जीविताये तानं नासंतं व निझपयितवे दानं दाहृति पालतिकं उपवासं व कछति (१४) इछा हि मे हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवू ति (१५) जनस च वढति विविधे धंमचलने सयमे दानसविभागे ति।

प्रज्ञापन ५

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह (२) सडुवीसति-वसाभिसितस मे इमानि पि जातानि अवध्यानि कटानि सेयथ सुके सालिक अलुने चकवाके हंसे नंदीमुखे गेलाटे जतूक अंबाकपिलिक दुडि अनठिकमछे वेदवेयके गगापुपुटके संकुजमछे कफटसेयके पंनससे सिमले संडके ओकपिंडे पलसते सेतकपोते गामकपोते सवे चतुपदे ये पटिभोगं नो एति नो च खादियति (३) अजका नानि एडका च सूकली च गभिनी व पायमीना व

अवध्य पोतके च कानि आसंमासिके (४) वधिकुकुटे नो कटविये (५) तुसे सजीवे नो मापयितविये (६) दावे अनठाये व विहिसाये व नो झापयितविये (७) जीवेन जीवे नो पुसितविये (८) तीसु चातुंमासीसु तिस्यं पुंनमासियं तिनि दिवसानि चावुदासं पंनडसं पटिपदं धुवाये च अनुपोसथं मछे अवध्ये नो पि विकेतविये (९) एतानि येव दिवसानि नागवनसि केवटभोगसि यानि अंनानि पि जीवनिकायानि नो हंतवियानि (१०) अठमिपखाये चावुदसाये पंनडसाये तिसाये पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने नो नीलखितविये अजके एडके सूकले ए था पि अने नीलखियति नो नीलखितविये (११) तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुंमासिपखाये अस्वस गेनस लखने नो कटविये (१२) यावसडुवीसतिवसाभिसितस मे एताये अतलिकाये पंनवीसति बंधनमोखानि कटानि।

प्रज्ञापन ६

(१) देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह (२) दुवाडसव साभिसितेन मे धंमलिपि लिखापित लोकस हितसुखाये से त अपहट तं तं धमवढि पापोव (३) हेवं लोकस हितसुखे ति पटिवेखामि अथा इय नातिसु हेवं पत्यासंनेसु हेवं अपकठेसु किंमं कानि सुखं आवहामी ति तथा च विदहामि (४) हेमेव सवनिकायेसु पटिवेखामि (५) सवपासंडा पि मे पूजित विविधाय पूजाय (६) ए चु इयं अतन पचूपगमने से मे मुख्यमुते (७) सडुवीसतिवसाभिसितेन मे इय धमलिपि लिखापित।

गौण शिलालेख

रूपनाथ

(१) देवानंपिये हेव आहा (२) सातिरकेकानि अढतियानि य य सुमि प्रकास सके (३) नो चु बाढि पकते (४) सातिलेके चु छवछरे य सुमि हकं सघ उपेते बाढि च पकते (५) या इमाय कालाय जंबुदिपसि अमिसा देवा हुसु ते दानि मिसा कटा (६) पकमसि हि एस फले (७) नो च एसा महतता पापोतवे खुदकेन पि पकममिनेना सकिये पिपुले पा स्वगे आरोधेवे (८) एतिय अठाय च सावने कटे खुदका च उडाला च पकमतु ति अता पि च जानतु इय पकरा व किति चिरठितिके सिया (९) इय हि अठे वढि वढिसिति विपुल च वढिसिति अपलधियेना दियढिय वढिसत (१०) इय च अठे पवतिसु लेखापेत वालत (११) हध च अथि सालाठभे सिलाठंभसि लाखापेतवय त (१२) एतिना च वयजनेना यावतक तुपक अहाले सवर विवसेतवाय ति (१३) व्युठेना सावने कटे (१४) २०० ५० ६ सत विवासा त ।

महमराम

(१) देवानांपिये हेवं आ ·· ···· ियानि सवछलानि। ऋं उपासके सुमि। (३) न चु बाढं पलकंते (४) सघछले साधिके। ऋं · ·····से (५) एतेन च अंतलेन। जंबुदीपसि। अमिसंदेया। संत मुनिसा मिसंदेव कटा। (६) पल ·· ····इयं फले (७) नो ···यं महतता च चकिये पावतवे। खुदकेन पि पलकममीनेना विपुले पि सुअग किये आला वे। (८) से एताये अठाये इयं सावाने। खुदका च उडाला चा पलकमंतु अता पि च जानंतु। चिलठितीके च पलाकमे होतु। (६) इय च अठे वढिमति। विपुलं पि च वढिसति दियाढियं अवलधियेना दियढियं वढिसति। (१०) इयं च सवने विवुथेन (११) दुवे सपंना लातिसता विवुथा ति २०० ५० ६ (१२) इम च अठं पवतेसु लिखापयाथा (१३) य · था अथि हेता सिलाथंभा तत पि लिखपयथ ति।

मस्की

(१) देवानंपियस असोकस...... ..अढति .. नि वषानि। अं सुमि बुधशके (३) . तिरे .. ..मि संघं उपगते उठ .. .. मि उपगते (४) पुरे जंबु सि ये अमिसा देवा हुसु ते दानि मिसिभूता (५) इय अठे खुदकेन पि धमयुतेन सके अधिगतवे (६) न हेवं दखितविये उडालके व इम अधिगछेया ति (७) खुदके च उडालके च वतविया हेवं वे वलंतं भदके से अ तिके च वुढिसिति चा दियढिय हेवं ति।

गवीमठ

(१) देवानंपिये आहा (२) सातिरेकानि अढतियानि वसानि यं सुमि उपासक (३) नो चु खो बाढं पकते (४) सवछरे सातिरेके यं मे सघ उपेति बाढ च मे पकते (५) से इमायं वेलायं जंबुदीपसि अमिसा देवा समाना मानुसेहि से दानि मिसा कटा (६) पकमस एस फले (७) नो हि इयं महतेनेव चकिये पापोतवे खुदकेन पि पकममीनेन विपुले पि चकिये स्वगे आराधयितवे (८) एताय च अठाय इयं सावने खुदका च उडाला च पकमंतु नि अंतां पि च जानतु चिरठितिके च पकमे होतु इयं च अठे वढिसिति विपुले च वढिसिति दियढियं पि च वढिसितीति।

बैराट

(१) देवानंपिये आहा (२) साति ' ···वसानि य हकं उपासके (३) नो चु बाढ अ ममया संघे उपयाते बाढ च जंबुदिपसि अमिसा न देवेहि मि पमस एस ले (७) नो हि एसे महतनेय चकिये कममिनेना विपुले पि स्वगे नक्ये आलाधेतवे (८) का च उडाला चा पलकमतु ति अंता पि च जानतु तो चिलठित ल पि वढिसति दियढिय वढिसति ।

ब्रह्मगिरी

(१) सुवणगिरीते अयपुतस महामातांणं च वचनेन इसिलसि महामाता आरोगिय वतविय हेव च वतविया (२) देवाणंपिये आणपयति (३) अधिकानि अढातियानि वसानि य हक ' सके (४) नो तु खो बाढ प्रकते हुस एक संवछर (५) सातिरेके तु खो संवछरं य मया संघे उपयीते बाढं च मे पक्रते (६) इमिना चु कालेन अमिसा समाना मुनिसा जंबुदीपसि मिसा देवेहि (७) पकमस हि इय फले (८) नो हीय सक्ये महात्पेनेय पापोतवे काम तु खो खुदकेन पि पकमि णेण विपुले स्वगे सक्ये आराधेतवे

(६) एतायठाय इयं सावणे सावापिते ······ ·· महात्पा च इमं पकमेयु ति अंता च मै जानेयु चिरठितीके च इयं पक········ (१०) इयं च अठे वढिसिति विपुलं पि च वढिसिति अवरधिया दियढियं वढिसिति (११) इयं च सावणे सावापिते व्यूथेन (१२) २०० ५० ६ (१३) से हेवं देवाणंपिये आह (१४) मातापितिसु सुसूसितविये हेमेव गरुसु प्राणेसु द्रढितव्यं सचं वतवियं से इमे धंमगुणा पवतितविया (१५) हेमेव अंतेवासिना आचरियें अपचायितविये न्यातिकेसु च कं य···रहं पवतितविये (१६) एसा पोराणा पकिती दीघावुसे च एस (१७) हेवं एस कटिविये (१८) चपडेन लिखिते लिपिकरेण।

सिद्धपुर

(१) सुवंणगिरीते अयपुतम महामाताणं च वचनेन इसिलसि महामाता आरोगियं वतविया (२) देवानंपिये हेवं आह (३) अधिकानि अढातियानि वसानि य हकं उपासके (४) नो तु खो बाढ पकंते हुसं एकं सवछं (५) सातिरेके तु खो संवछरे यं मया संघे उपयीते बाढं च मे पकंते (६) इमिना चु कालेन अमिसा समाना मु······ ···जंबुद्···· · ·· मिसा देवेहि (७) पकमस हि इयं फले (८) नो हि इय सके म·· ···नेव पापोतवे कामं तु खो खुद्-केन पि प · ··· ··न विपुले स्वगे सके आराधेतवे (६) से ··· य इयं सावणे साविते यथा खुदका च महात्पा च इमं पकमेयु ति अता च · ·· ···चिरठितीके च इयं पकमे होति (१०) ········ वढिसिति विपुलं पि च वढिसिति अ ···· ·· यढियं वढिसिति (११। इयं च सावणे··· · ···(१२) २०० ५० ६ (१३) मा········· सितविये ·· · ··हितव्यं शचं वत···यं इमे धंमगु··· ·····(१४) हेमेव अं ·· · ·········आचरिये अपचायितविये सु··· ········ (१५) एसा पोराणा···किती दीघावुसे च (१६) हेमेव · ·तेविसिने च आचरियें·· ··· · धारहं पवतितव · म ···· ···स तथा कटविये (१८) चप ······· ण।

जटिंग-रामेश्वर

(१)·········तान् च व·········इसि·········विया (२) देवान ·· ····· य हुर्क ·· ·····क्षो वाढ · · · ·· (४) ··तिरेके यं···या······ · ण ·· ·····हि इयं ·· ·····च ·········ढिस······ पुलं पि ·········यढियं ·········(११) इ सावणे ·········थेन (१२) २०० ५० ६ (१३) हेमेव मातापितुसु·········सितविये हेमेव········· न तेसु ···ह्मिनत्यं सचं वतवियं मे इमे ·· ·····हेवं पवतितविया (१४) स्वम्रं न ते सतवस··· ···तविय हेमेव आचरिये अंतेवासिना ···· ··राणा पकिती··· सितविया·········वियं ··चरिये अ······· ··आचरियश ञातिका ते··· यथारहं पवतितविये (१५) एसा पोराणा पकिती दीघा च (१६) हेमेव श ··· ··। · च य ·· ····· वतितविये (१७) हेवं धंमे देवानंपिय ·· ······ वं फटविये (१८) ···डेन लिखितं · पिकरेण।

इलाहबाद*

(१) देवानपिये आनपयति (२) कोसंबिय महामात ·· समगे कटे (४ सघसि नो लहिये ·········सघ भाखति भिखु वा भिखुनि वा से पि चा ओदातानि दुसानि सनधापयितु अनावा ससि आवासयियेे।

रानी का प्रज्ञापन†

(१) देवानपियपा वचनेना सवत महामता वतविया (२) ए हेता दुतियाये देवीये दाने अंबावडिका वा आलमे व दानगहे व ए वा पि अने कीछि गनीयति ताये देविये पे नानि (३) हेव न दुतीयाये देविये ति तीवलमातु कालुवाकिये।

---

*यह लेख इलाहबाद स्तम्भ पर ६ प्रधान स्तम्भ लेखों के बाद खुदा है।

†यह लेख इलाहबाद स्तम्भ पर ६ प्रधान स्तम्भ लेखों के बाद उक्त लेख के ऊपर खुदा है।

रुम्मिनीदेई स्तंभ

(१) देवानपियेन पियदसिन लाजिन वीसतिवसाभिसितेन अतन आगाच महीयिते हिद बुधे जाते सक्यमुनी ति (२) सिला विगडभी चा कालापित सिलाथभे च उसपापिते हिद भगवं जाते ति (३) लुंमिनिगामे उबलिके कटे अठभागिये च।

कपिलेश्वर शिला लेख

(१) देवानंपियेन पियदशिन लाजिन विसाभिसितेन आगाच महीयिते बुध जाते सक्यमुनी ति (२) सिला विगडभी चा कालपित सिलाथभे वा उसपापित हिद भगवं जाते ति (३) लुंमिनि गामे उबलिके कटे व्यूठे २०० ४० अठ भागियये च ၥ लुम्द्रय ၥ

निगलिया स्तंभ

(१) देवानंपियेन पियदसिन लाजिन चोदसवसाभिसितेन बुधस कोनाकमनस थुबं दुतिय वढिते (२)...... ...साभिसितेन च अतन आगाच महीयिते..... ... पापिते।

कलकत्ता-वैराट

(१) प्रियदसि लाजा मागधे संघं अभिवादेतून आहा अपाबाधतं च फासुविहालतं चा (२) विदिते वे भंते आवतके हमा बुधसि धंमसि संघसी ति गालवे च प्रसादे च (३) ए केचि भंते भगवता बुधेन भासिते सर्वे से सुभासिते वा (४) ए चु खो भंते हमियाये दिसेया हेवं सधंम चिलठितीके होसती ति अलहामि हक तं वातवे (५) इमानि भंते धंमपलियायानि विनयसमुकसे अलियवसाणि अनागतभयानि मुनिगाथा मोनेयसूते उपतिसपसिने ए च लाघुलोवादे मुसावादं अधिगिच्य भगवता बुधेन भासिते एतानि भंते धंमपलियायानि इछामि किति बहुके भिखुपाये चा भिखुनिये चा अभिखिन सुनेयु चा उपधालयेयू चा (६) हेवमेवा उपासका चा उपासिका चा (७) एतेनि भंते इमं लिखापयामि अभिप्रेत मे जानतू ति ।

गौण स्तम्भलेख

सांची

······ · या भेत ·· (३) · घे ······ मगे कटे भिखूनं च भिखुनीनं चा ति पुतपपोतिके चंदमसूरियेके (४) ये संघं भाखति भिखु वा भिखुनि वा ओदातानि दुसानि सनंधापयितु अनावाससि वासापेतवियं (५) इछा हि मे किं ति संघे समगे चिलथितीके सिया ति।

सारनाथ

(१) देवा ए ल ··· पाट ये केनपि सवे भेतवे (४) ए चुं खो भिखू वा भिखुनि वा संघं भाखति से ओदातानि दुसानि संनंधापयिया आनावाससि आवासनिये (५) हेवं इयं सासने भिखुसंघसि च भिखुनिसंघसि च विंनपयितविये (६) हेवं देवानंपिये आहा (७) हेदिसा च इका लिपी तुफाकंतिक हुवाति ससलनसि निखिता इक च लिपिं हेदिसमेव उपासकानं-तिकं निखिपाथ (८) ते पि च उपासका अनुपोसथं यावु एतमेव सासनं विस्वसयितवे अनुपोसथं च धुवाये इकिके महामाते पोस-थाये याति एतमेव सासनं विस्वंसयितवे आजानितवे च (९) आवते च तुफाकं आहाले सवत विवासयाथ तुफे एतेन वियंजनेन (१०) हेमेव सवेसु कोटविषवेसु एतेन वियंजनेन विवासापयाथा।

इलाहबाद*

(१) देवानपिये आनपयति (२) कोसंबिय महामात ·· ·· समगे कटे (४ संघसि नो लहिये ·········संघं भाखति भिखु वा भिखुनि वा से पि चा ओदातानि दुसानि सनंधापयितु अनावाससि आवासयिये।

रानी का प्रज्ञापन†

(१) देवानपियपा वचनेना सवत महामता वतविया (२) ए हेता दुतियाये देवीये दाने अबाधडिका या आलमे व दानगहे व ए वा पि अने कीछि गनीयति ताये देविये पे नानि (३) हेवं ·· न दुतीयाये देविये ति तीवलमातु कालुवाकिये।

---

*यह लेख इलाहबाद स्तम्भ पर ६ प्रधान स्तम्भ लेखों के बाद खुदा है।
†यह लेख इलाहबाद स्तम्भ पर ६ प्रधान स्तम्भ लेखों के बाद उक्त लेख के ऊपर खुदा है।

रुम्मिनीदेई स्तंभ

(१) देवानपियेन पियदसिन लाजिन बीसतिवसाभिसितेन अतन आगाच महीयिते हिद बुधे जाते सक्यमुनी ति (२) सिला विगडभी चा कालापित सिलाथभे च उसपापिते हिद भगव जाते ति (३) लुंमिनिगामे उबलिके कटे अठभागिये च।

कपिलेश्वर शिला लेख

(१) देवानपियेन पियदशिन लाजिन विसाभिसितेन आगाच महीयिते बुध जाते सक्यमुनी ति (२) सिला विगडभी चा कालपित सिलायभे वा उसपापित हिद भगवं जाते ति (३) लुंमिनि गामे उबलिके कटे व्यूठे २०० ४० अठ भागिगये च ∩ छुम्द्रय ∩

निगलिया स्तंभ

(१) देवानंपियेन पियदसिन लाजिन चौदसवसाभिसितेन बुधस कोनाकमनस थुवे दुतिय वढिते (२)...... ...साभिसितेन च अतन आगाच महीयिते...... .. पापिते।

गुफालेख

बराबर

प्रज्ञापन १

लाजिना पियदसिना दुवाडसवसाभिसितेना इय निगोह-कुभा दिना आजीविकेहि।

प्रज्ञापन २

लाजिना पियदसिना दुवाडसवसाभिसितेना इय कुभा खलतिकपवतसि दिना आजीविकेहि।

प्रज्ञापन ३

लाज पियदसी एकुनवीसतिवसाभिसिते जलघोसागम-थात मे इय कुभा सुपिये ख दिना।